राजस्थान के इतिहास के प्रमुख स्त्रोत
(MAIN SOURCES OF RAJASTHAN HISTORY)

लेखक

डॉ एस एल नागोरी

एम ए (गोल्ड मैडलिस्ट) पी–एच डी

प्राध्यापक स्नातकोत्तर इतिहास विभाग,

राजकीय महाविद्यालय,

सिरोही (राज)

दी स्टूडेण्ट्स बुक कम्पनी

मूल्य 25 00

सन् 1986 87

फोन [72455
74087

प्रकाशक ताराचन्द वर्मा दी स्टूडेण्टस बुक कम्पनी
चौड़ा रास्ता, जयपुर-302003

मुद्रक सम्राट प्रिण्टर्स, चेलों का रास्ता, जयपुर-302003

अपने पूज्य पिताजी

की

पूण्य स्मृति में

दो शब्द

डॉ एस एल नागोरी द्वारा लिखी गई इस नई पुस्तक के बारे मे दो शब्द लखते हुए मुझे अत्यन्त हर्ष का अनुभव हो रहा है।

मैं पीछे पलटकर लगभग 16–17 वर्ष पूर्व का वो दिन याद किये बिना नहीं रह सकता जब चित्तौड मे अपनी नियुक्ति के दिनो मेरी मुलाकात एक होनहार बालक हुई। जीवन की अनेक समस्याओ के रहते हुए भी उनके मन मे आशा और विश्वास की शक्ति थी। विशेष रूप से बालक मे कुछ करने अथवा कर दिखाने की अभिलाषा थी।

इसलिये मुझे बाद मे यह जानकर रत्ती भर भी आश्चर्य नही हुआ कि वो बालक उदयपुर जा पहुँचा और वहा अपनी ही मेहनत और लगन से उसने अपना अध्ययन भी जारी रखा और अपने परिवार के भी हाथ मजबूत किये। समय समय पर उनके कुशलक्षेम के समाचार मिलते रहे। उस होनहार ने बी ए पास किया, एम ए किया और फिर डाक्टरेट की उपाधी भी प्राप्त की।

डॉ नागोरी का कहना है कि उन्हे समय समय पर मुझसे मार्गदर्शन मिलता रहा और प्रेरणा भी। न जाने वे ऐसा क्यो सोचते है? क्योकि देखा जाय तो उन्होंने अपने लिये आज समाज मे अथवा शिक्षा के क्षेत्र मे जो छोटा मोटा स्थान प्राप्त किया है, अपनी ही मेहनत और लगन के फलस्वरूप आज भी उनके सामने अनेक समस्यायें अथवा उलझनें है, फिर भी वे अपनी लगन और मेहनत से पीछे नही हटे।

अपने मे यह कोई छोटी बात नही कि इन पिछले 6–7 वर्षों मे उन्होने एक के बाद एक अनेक पुस्तकें लिख डाली है जिनमे विद्यार्थियो के लिए पर्याप्त सामग्री जुटाई गई है। यह तो मानना ही पडेगा कि जो थोडी बहुत प्रतिष्ठा उन्हे मिली है अथवा जो प्रतिभा वे दिखा पाये हैं, वो उनके अथक परिश्रम का ही नतीजा है। चूँकि ये सभी पुस्तकें बी ए, एम ए इत्यादि के पाठ्यक्रमो को ध्यान मे रखकर ही लिखी गई है इसलिय इनमे चाहे मौलिकता का अभाव हो लेकिन कोई यह नही कह सकता कि सभी आवश्यक तथ्य प्रस्तुत नही किये गये अथवा उनकी रचना और शैली मे सरसता और रोचकता नही है।

इन शब्दो के साथ मै उनकी नई पुस्तक जो राजस्थान के इतिहास के प्रमुख स्रोत" प्रस्तुत करने के लिये लिखी गई है, उसका स्वागत करता हूँ। मुझे विश्वास है कि इस पुस्तक के पाठक, विशेष रूप से स्नातकोत्तर स्तर की कक्षाओ के विद्यार्थी, इस पुस्तक मे अनेक तथ्य और सन्दर्भ देख पाएँगे, जिनसे उन्हे उनके अपने कार्य मे सहायता मिलेगी।

मैं आशा करता हूँ कि डाक्टर नागोरी की यह साधना भविष्य मे भी बनी रहेगी।

शुभेच्छु

भूपेन्द्र हूजा

आई ए एस (सेवा निवृत्त)

11, उनियारा गार्डन

जयपुर–302004

भूमिका

मैंने "राजस्थान के इतिहास के प्रमुख स्रोत" नामक पुस्तक स्नातकोत्तर इतिहास म पढने वाले विद्यार्थिया के लिये राजस्थान विश्वविद्यालय के पाठ्यक्रम के आधार पर लिखी है। मेरा यह विश्वास है कि यह पुस्तक विद्यार्थियो एव इतिहास के पाठको के लिये उपयोगी सिद्ध होगी।

प्रस्तुत पुस्तक को लिखने मे मैंने जिन ऐतिहासिक कृतियो की सहायता ली है उन इतिहासकारो के प्रति आभार व्यक्त करना मै अपना परम कत्तव्य मानता हू।

मैं पूज्य श्री हूजा साहब आई ए एम (सेवा निवृत्त) के प्रति हार्दिक कृतज्ञता नापित करता हूँ। जो मुझे हमेशा लेखन काय हेतु प्रेरणा त रहे एव दु खद घडियो मे भी मेरा उत्साहवद्ध न किया। इतना ही नहीं मेरे निवेदन करने पर इस पुस्तक के लिये दो शब्द लिखने की भी कृपा की।

मैं डा सोहनलाल पटनी प्रो सी आर गहलोत एव आर सी गोयल सा को भी धन्यवाद दिये बिना नही रह सकता जि होंने अपने अमूल्य समय एव सुझावों से इस काय को पूण करने म योगदान दिया।

मैं इस अवसर पर मेरे परम स्नेही वैद्य श्री भगवती सहाय शर्मा को भी नही भूल सकता, जिन्होंने मुझे सतत् सहयोग प्रदान किया 'धन्यवाद' जैसा शब्द यहाँ आकर बहुत छोटा प्रतीत होता है।

मुझे अपनी धमपत्नी श्रीमती काता नागोरी, सुपुत्र श्री दीपश एव जातेश का इस पुस्तक के लेखन काय के दौरान निरन्तर सहयोग मिलता रहा। उनके सहयोग के अभाव मे यह पुस्तक प्रकाशन हेतु इतनी जल्दी तैयार नही हो सकती थी। अत वे भी बधाई के पात्र है।

म श्री ताराचन्दजी शर्मा साहब दी स्टूडण्टस बुक कम्पनी जयपुर के प्रति भी आभारी हूँ जिन्होंने अल्प समय म इस पुस्तक को इतने सुदर रूप म प्रकाशित कर मेरा उत्साह बढाया है।

राजकीय महाविद्यालय,
सिरोही (राज)

डॉ एस एल नागोरी

12-5-88

UNIVERSITY OF RAJASTHAN

M A (Final) History

SYLLABUS

Paper IV (C) Sources of Rajasthan History

Study of Important Inscription The Bijolia Inscription The Kumbhalgarh Inscription The Chittorgarh Inscription Bikaner Inscription of Rai Singh Raj Prashsati Mahakavya Study of Archival Records Literary Sources for the study of History of Rajasthan The Khyats Vanshavalis-The persian Sources Nainsi, Bankidas Surya Mal Mishrana-Tod Dayal Dass Kaviraja Shyamal Das and Dr G H Ojha as Historians

विषय-सूची

प्रवेश

यदि इतिहास का विद्यार्थी किसी भी काल का अध्ययन करना चाहता है तो उसे चाहिये कि वह उस काल विशेष म प्रचलित दन्तकथाओं पर विश्वास नही करे। ऐसा करने पर वह उस काल के इतिहास के साथ न्याय नही कर पायगा। इसलिये उस उस काल विशेष के शिलालेखो, सिक्को, स्मारको, ताम्रपत्रो एव तात्कालिक साहित्य सम्बन्धी सामग्री का सहारा लेना चाहिये। इन साधनों का आधार बनाकर यदि वह उस काल के इतिहास का अध्ययन करे तो उस काल के इतिहास के साथ सही न्याय कर पायेगा। साहित्यकार वड सवथ का मानना है कि "वहता हुआ झरना, एक रोडा व जमीन मे दबी हुई चीजें प्राचीन मानव की सही जानकारी देती है, किताबें नही।" हमे वड सवथ का कथन सत्य प्रतीत होता है।

प्राचीन इतिहास के स्रोत

प्राचीन काल का अधिकाश इतिहास लिपिबद्ध नही है। इसलिये लिखित इतिहास की कमी के कारण हमे उस काल के इतिहास की जानकारी शिलालेखो, सिक्को स्मारको हिन्दू धम के साहित्य (वेद, पुराण एव उपनिषद), बौद्ध धम के साहित्य (जातक कथाओ), एव जैन धम के साहित्य से प्राप्त होती है। परन्तु जब हम इन धार्मिक ग्रन्थो का अध्ययन करते हैं तो उस काल विशेष के इतिहास की जानकारी प्राप्त करने म हम निम्न कठिनाइयो का सामना करना पडता है —

(i) इतिहास स सम्बन्धित घटनाओ को धार्मिक घटनाओ स इस प्रकार से मिला दिया गया है कि उन्हे अलग करना नितान्त असम्भव है। इसके अतिरिक्त घटनाओ का वणन क्रमबद्ध रूप से तथा विस्तारपूवक नही किया गया है।

(ii) इन ग्रन्थो म सत्य और गल्प को इस प्रकार से मिला दिया गया है कि उनमे से इतिहास से सम्बन्धित तथ्यो की छानबीन करना बहुत कठिन काय है।

(iii) धार्मिक ग्रन्थो मे घटनाओ के वणन के साथ तिथियाँ नही दी गई है। इसलिये इतिहास के विद्यार्थी के लिये बिना तिथियो के उस काल विशेष के इतिहास के साथ न्याय करना असम्भव है।

इतिहास जानने के साधनो के अभाव का एक मुख्य कारण यह भी है कि भारतवष पर पहली शताब्दी स लेकर बीसवी शताब्दी तक विदेशी लोग निरन्तर आक्रमण करते रहे। अत इतिहास जानने की अधिकाश सामग्री आक्रान्ताओ द्वारा नष्ट कर दी गई। एव कुछ आक्रमणो के समय स्वत ही नष्ट हो गई।

मध्यकालीन राजस्थान के इतिहास जानने के साधन

प्राचीन काल मे लिखित इतिहास की कमी होने के कारण इतिहास के विद्यार्थी को पुरातत्व सम्बन्धी सामग्री पर निर्भर रहना पड़ता है। इसके अतिरिक्त उस काल की सामग्री भी कम मात्रा मे उपलब्ध है जबकि मध्यकालीन राजस्थान के इतिहास जानने की सामग्री प्रचुरमात्रा मे उपलब्ध है। इसलिये इतिहास के विद्यार्थी को जितनी कठिनाई प्राचीन राजस्थान के इतिहास का अध्ययन करने मे होती है उतनी मध्यकालीन राजस्थान के इतिहास के अध्ययन मे नहीं होती।

मध्यकालीन राजस्थान के इतिहास जानने के साधनो को सुविधा की दृष्टि से हम निम्न भागो मे विभाजित कर सकते हैं —

1 पुरातत्व सम्बन्धी सामग्री।
2 ऐतिहासिक साहित्य।
3 पुरालेख सम्बन्धी सामग्री।
4 राजस्थान के आधुनिक इतिहासकार।
5 वर्तमान समय के इतिहासकार।

इन साधनो का वर्णन क्रमबद्ध रूप से अगले पृष्ठो मे किया जायेगा।

---

1 पुरातत्व सम्बन्धी सामग्री

पुरातत्व सम्बन्धी सामग्री म हम शिलालेखो, ताम्रपत्रो, खण्डहरो राजमुद्राओ अस्त्रो शस्त्रो, एव बतनो आदि को सम्मिलित कर सकते हैं, जिन्होंने राजस्थान के इतिहास के निर्माण मे महत्वपूर्ण योगदान दिया है। यदि ये सामग्री उपलब्ध न होती तो सम्भवतया राजस्थान का ऐतिहासिक विवरण काफी सीमा तक अधूरा रह जाता। पुरातत्व सम्बन्धी सामग्री का निम्न चार भागो मे विभाजित किया जा सकता है —

(i) शिलालेख (ii) मुद्रायें (iii) ताम्र पत्र (iv) स्मारक

(i) शिलालेख

मध्यकालीन अभिलेख सस्कृत एव राजस्थानी भाषा म लिपिबद्ध हैं जो शिलाओ प्रतिमाओ मन्दिरो की दीवारो, स्तम्भो, ताम्र पत्रो, एव पत्थर की पट्टिया पर खुदे हुए है। डा जी एन शर्मा के अनुसार ये शिलालेख इसलिये महत्वपूर्ण है क्योकि—

(i) इनसे राजाओ की उपलब्धियो के बारे मे जानकारी मिलती है।

(ii) घटनाओ के वर्णन म तिथिया दी हुई हैं, जिनसे तिथिक्रम निधारित किया जा सकता है।

(iii) तत्कालीन राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक एव धार्मिक स्थिति के बारे म महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त होती है।

शिलालेखो मे वर्णित घटनाओ को अधिक विश्वसनीय नही माना जा सकता। इसका प्रमुख कारण यह है कि ये शिलालेख राजकीय आश्रय मे लिखवाये गये। इसलिये इनमें राजा विशेष के बारे मे अतिशयोक्तिपूर्ण वणन किया गया है फिर भी इनमे प्रयुक्त तिथियो पर हम निस्सकोच विश्वास कर सकते है।

सभी शिलालेखों का यहा पर वर्णन करना सम्भव नही है। हम यहा पर मुख्य मुख्य शिलालेखो का वणन कर उनकी उपयोगिता का मूल्याकन करेंगे।

1 बिजोलिया का स्तम्भ लेख (1169 ई)

यह शिलालेख बिजोलिया के पार्श्वनाथ मन्दिर की उत्तरी दीवार के पास एक चट्टान पर 1169 ई म लिपिबद्ध करवाया गया था। इसमे 32 श्लोक हैं और यह सस्कृत भाषा मे लिखा हुआ है। इसे लोलाक ने, जो कि दिगम्बर जैन

श्रावक था, पार्श्वनाथ मन्दिर और कुण्ड के निर्माण की स्मृति मे लिपिबद्ध करवाया था ।

लेख से ऐतिहासिक जानकारी

(i) इससे हम साम्भर और अजमेर के चौहान शासकों की वंशावली के बारे मे जानकारी प्राप्त होती है । इस वंशावली म जयराज विग्रहराज, चन्द्रराज गोपेन्द्रराज, दुलभराज, गोविन्दराज, चन्द्रराज गुवक, चन्द्रराज, वाक्पतिराज, विन्ध्यराज, विग्रहराज, गोविन्दसिंह, दुलभराज, पृथ्वीराज, अजयराज, अर्णोराज आदि शासकों के बारे म पता चलता है । इनके अतिरिक्त इन शासकों की उपलब्धियों का वर्णन भी इसम किया गया है ।

(ii) इससे पता चलता है कि चौहानों की उत्पत्ति वत्स गोत्र के ब्राह्मणों से हुई थी (विप्र श्री वत्स गोत्रमत)

(iii) इससे हमे उस काल की सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक और शिक्षा सम्बन्धी व्यवस्था के बारे मे जानकारी प्राप्त होती है ।

(iv) इस लेख से पता चलता है कि आधुनिक शहरो के प्राचीन नाम क्या थे जैसे श्री माल (भीनमाल) जावालिपुर (जालौर) नड्डुल (नाडोल) एव दिल्लिका (दिल्ली) । इसी तरह पहले बिजोलिया के आसपास का पठारी भाग उत्तमाद्री के नाम स जाना जाता था । जो वर्तमान मे ऊपर माल के नाम मे विख्यात है । प्रशस्तिकार न इस लेख म लिखा है कि मेवाड का यह भाग उस समय काफी उपजाऊ था और आर्थिक दृष्टि से काफी समृद्ध था ।

(v) इससे हमे उस समय की आबादी के स्तर के बारे मे जानकारी प्राप्त होती है ।

(vi) इसमे यह भी पता चलता है कि उस समय कुटिला नदी के पास कई शैव तथा जैन तीर्थ स्थल थे ।

(vii) यह लेख जैन तीर्थस्थल के अतिरिक्त घटेश्वर, कुटिलेश, काटीश्वर, कुमारेश्वर दक्षिणेश्वर जातेश्वर, सत्योवरेश्वर महाकाल एव कपिलेश्वर आदि तीर्थस्थलो के बारे म भी जानकारी देता है । इसमे वनस्पति के बारे मे वर्णन किया गया है । जिससे यह पता चलता है कि यह प्रदेश आर्थिक दृष्टि से काफी सम्पन्न था ।

(viii) इसम सामन्त एव भुक्ति आदि शब्दो का वर्णन आता है, जिससे उस युग की सामाजिक स्थिति के बारे म पता चलता है ।

(ix) इस प्रशस्ति की रचना गुणभद्र ने की थी । केशव, जो कि कायस्थ जाति का था, ने इसको लिखा था और अंकित करवाने वाला व्यक्ति गोविन्द था, जो कि नानिग का पुत्र था ।

(x) यह लेख इस बात पर भी प्रकाश डालता है कि उस काल मे दान दी जाने वाली भूमि (भूमि अनुदान) को डोहली के नाम से पुकारा जाता था । इसी

तरह से भूमि का विभाजन क्षेत्रा मे किया जाता था। इसके अतिरिक्त ग्राम समूह की बडी इकाई को प्रतिगए के नाम से जाना जाता था। इन प्रतिगणा के जो अधिकारी थे उनको महत्तम और परिग्रही के नामो से पुकारा जाता था।

2 चीरवे का शिलालेख (1273 ई)

चीरवा नामक गाव उदयपुर से 8 मील की दूरी पर उत्तर दिशा मे है। यह लेख चीरवा के एक मन्दिर की बाहरी दीवार पर अकित है। इसमे 52 श्लोक है, जो सस्कृत भाषा म लिखे हुए है। यह लेख 1273 ई का है। यह लेख उस समय लिखा गया था जिस समय मेवाड पर राणा समरसिह शासन कर रहा था।

ऐतिहासिक महत्व —

(i) इस लेख से गुहिलवशीय राजाग्रो, बापा, पद्मसिह, जेत्रसिह, तेजसिह एव समरसिह ग्रादि शासको की उपलब्धिया के बारे मे जानकारी प्राप्त होती है।

(ii) इसम हाटेड जाति के तलारक्षो का वर्णन ग्राता है। यह जाति उस युग की शासन व्यवस्था का एक अग थी।

(iii) इस लेख से उस समय की धार्मिक स्थिति के बारे मे जानकारी प्राप्त होती है। जसे विष्णु मन्दिर की स्थापना, एव शिव मन्दिर के लिये खेता का अनुदान ।

(iv) इससे हम चीरवा गाव की स्थिति तथा सामाजिक परम्पराग्रा के बारे म जानकारी प्राप्त होती है। जैसे कि—सती प्रथा के प्रचलन के बारे मे।

(v) इस लेख का रचियता रत्न प्रभु सूरी था। इसको पार्श्वचन्द्र ने लिखा था तथा केलीसिह खोदने वाला था एव देल्हण,शिल्पी था।

3 रसिया की छत्री का शिलालेख (1274 ई)

यह लख 1274 ई म खुदवाया गया था। इसकी एक ही शिला सुरक्षित बची हुई है, जो चित्तौड के राजमहलो के द्वार पर लगी हुई है।

ऐतिहासिक महत्व

(i) इससे बापा से लेकर नरवर्मा तक के गुहिलवशीय मेवाड के महाराणाग्रा क बारे म जानकारी मिलती है।

(ii) इसम 13 वी शताब्दी के जनजीवन का अच्छा वर्णन किया गया है।

(iii) यह लेख नागदा एव देलवाडा ग्रादि गावा के बारे मे अच्छी जानकारी देता है। इसके अलावा इसम दक्षिणी पश्चिमी राजस्थान की वनस्पति का भी सुन्दर वर्णन किया गया है।

(iv) इससे उस समय की सामाजिक अवस्था के बारे मे जानकारी प्राप्त होती है। जैसे कि—वदिक यज्ञ-परम्परा एव उस स्थान के ग्रादिम निवासियो के ग्राभूषण के बारे मे। इसके अतिरिक्त इसमे उस समय के शिक्षा के स्तर पर भी प्रकाश डाला गया है।

4 पार्श्वनाथ के मन्दिर का शिलालेख (1278 ई)

तेजसिह की रानी जयतल्लदेवी ने चित्तौड मे एक पाश्वनाथ के मन्दिर का निमाण करवाया था। तब 1278 ई म यह लेख लिपिबद्ध करवाया था। इस मन्दिर का निर्माण उक्त रानी ने भतृपुरीय आचाय के उपदेशा से प्रभावित होकर करवाया था।

ऐतिहासिक महत्व

(i) इस लेख से पता चलता है कि इस मन्दिर के मठ के लिय भूमि अनुदान दिया गया था। तथा चित्तौड, सज्जनपुर, खोहर और आहड की मडिया से इस मठ के लिये घी और तेल आदि दिया गया था।

(ii) इससे उस काल की राजनैतिक स्थिति एव धामिक स्थिति के बारे म जानकारी प्राप्त होती है।

5 आबू का शिलालेख (1285 ई)

यह लेख 1285 ई का है। इसका रचियता वेद शर्मा था, जो चित्तौड का रहने वाला था। इसको शुभचन्द्र ने लिखा था और इसका शिल्पकार कर्मसिह था। यह शिलालेख 62 श्लोका मे लिपबिद्ध है।

ऐतिहासिक महत्व

(i) इससे बापा से लेकर समरसिह तक के मेवाड के शासका के बारे मे जानकारी प्राप्त होती है।

(ii) इससे यह भी पता चलता है कि भावशकर, जो कि अचलेश्वर का मठाधीश था, के कहने पर समरसिंह ने मठ का जीर्णोद्धार करवाया था तथा तपस्वियो के लिये भोजन की व्यवस्था की थी।

(iii) यह लेख आबू की वनस्पति पर प्रकाश डालता है। तथा उस काल के जप, ध्यान तथा यज्ञ से सम्बन्धित मान्यताओ की जानकारी देता है।

6 देलवाडा का शिलालेख (1434 ई)

यह शिलालेख 18 पक्तियो म लिपिबद्ध 1434 ई का है। इसकी 8 पक्तिया सस्कृत भाषा में लिखी हुई है।

ऐतिहासिक महत्व

(i) यह शिलालेख चौदहवी सदी के राजनीतिक, धार्मिक एव आर्थिक व्यवस्था पर प्रकाश डालता है।

(ii) यह लेख उस काल मे प्रचलित मेवाडी भाषा म लिपिबद्ध है। इससे यह पता चलता है कि उस समय बोलचाल की भाषा मेवाडी थी।

(iii) इससे मालुम होता है कि सेहलथनामी स्थानीय अधिकारी उस समय कर लिया करते थे तथा टक नाम की मुद्रा प्रचलित थी।

7 शृंगी ऋषि का शिलालेख (1428 ई)

यह लेख 1428 ई का है, जो एकलिंगजी से 6 मील दक्षिण-पूर्व में शृंगीऋषि नामक स्थान पर लगा हुआ है। इस का रचियता कविराज वाणीविलास योगीश्वर था। इसको खोदने वाला पन्ना नामक व्यक्ति था, जो हादा का पुत्र था। इसका कुछ भाग खण्डित हो गया है।

ऐतिहासिक महत्व

(i) इससे पता चलता है कि हम्मीर ने जीलवाडे को जबरदस्ती छीन लिया तथा पालनपुर को नष्ट भ्रष्ट कर दिया। इसके अतिरिक्त उसने भीलों के साथ भी सफलतापूर्वक युद्ध लडे एव उसने अपने शत्रु जैत्र को भी मौत के घाट उतार दिया।

(ii) यह लेख लक्ष्मणसिंह और क्षेत्रसिंह द्वारा गया मे मन्दिरो के निर्माण करवाने तथा उनकी दानवृति पर प्रकाश डालता है।

8 समिधेश्वर के मन्दिर का शिलालेख (1428 ई)

यह लेख 1428 ई का है। इसका रचियता एकनाथ था जो कि दशपुर जाति के भट्टविष्णु का पुत्र था। इसका लेखक वीसल था और मन्ना के पुत्र गोविन्द ने अंकित किया था।

ऐतिहासिक महत्व

(i) यह उस समय के शिल्पिया के परिवार पर प्रकाश डालता है।

(ii) इससे पता चलता है कि विष्णु के मन्दिर का निर्माण मोकल के द्वारा करवाया गया था।

(iii) महाराणा लाखा (लक्ष्मणसिंह) ने भोटिंग भट्ट जैसे विद्वानों को उदारतापूर्वक आश्रय दिया था।

9 राणकपुर प्रशस्ति (1439 ई)

यह लेख राणकपुर के जैन चौमुख मन्दिर म लगा हुआ है और 1439 ई म लिपिबद्ध किया गया था।

ऐतिहासिक महत्व

(i) इससे पता चलता है कि सूत्रधार दीपा ने राणकपुर के मन्दिर का निर्माण करवाया था।

(ii) इससे हम बापा स कुम्भा तक की वशावली के बारे मे जानकारी प्राप्त होती है। इस वशावली म महेन्द्र एव अपराजित आदि कई शासको के नाम नही है। इसी प्रकार यह लिखना कि बापा गुहिल का पुत्र था, सही नही है। इतनी भूलें होने पर भी यह लेख महाराणा कुम्भा की उपलब्धियो पर प्रकाश डालता है। इससे पता चलता है कि कुम्भा ने बून्दी, गागरोन, नागौर, सारगपुर, नाटसू, अजमेर, मण्डोर और कुम्भलगढ़ आदि प्रदेशो पर विजय प्राप्त की थी।

(iii) इस लेख से यह भी जानकारी मिलती है कि उस समय नाणक नामक मुद्रा का प्रचलन था।

10 कुम्भलगढ़ प्रशस्ति (1460 ई)

यह लेख 1460 ई का है। इसमे 64 श्लोक है, जो कि संस्कृत भाषा म लिखे हुए है। इससे महाराणा कुम्भा की उपलब्धियो के बारे म जानकारी प्राप्त होती है। यह लेख पत्थर की पाच बडी बडी चट्टानो पर अंकित करवाया गया था जिसम पहली, तीसरी और चौथी शिलाए अभी भी है लेकिन दूसरी शिला का एक छोटा सा टुकडा ही प्राप्त हो सका है। ये शिलायें कुम्भश्याम का मदिर जो कुम्भलगढ मे है, वहां पर लगाई गई थी परन्तु अब उनको वहां से हटाकर उदयपुर के संग्रहालय मे भेज दिया गया है। इन शिलाओ के बहुत सारे अक्षर नष्ट होने पर भी उन पर लिखे हुए वर्णन को समझने म कोई विशेष कठिनाई नहीं होती है।

प्रशस्ति की रचना

इस प्रशस्ति की रचना किसने की इस विषय म निश्चित रूप से कुछ नही कहा जा सकता। डॉ ओझा के अनुसार इस प्रशस्ति की रचना महेश न की। उनके अनुसार इसका कारण यह है कि कुम्भलगढ प्रशस्ति के कई श्लोक चितौड की प्रशस्ति स मिलते जुलते है। डॉ ओझा का मत इसलिये स्वीकार नहीं कर सकते क्योंकि दोनो प्रशस्तियां एक ही समय म दूरस्थ भागो मे लगाई गई थी इसलिये महेश द्वारा इन दोनो की एक साथ रचना करना सम्भव नही है। इस प्रशस्ति का रचयिता कान्ह व्यास हो सकता है जो उस समय कुम्भलगढ म ही रहता था।

ऐतिहासिक महत्व

यह लेख मेवाड के महाराणाओ की वंशावली जानने के लिए बहुत उपयोगी ह। पहली शिला म 68 श्लोक है। इसके 58 से लेकर 68 श्लोक मेवाड के पहाडो, नदियां झीलो, बगीचा और जनसमुदाय पर अच्छा प्रकाश डालते है। इसके अतिरिक्त इस शिला से एकलिंगजी के मंदिर एव समाधिश्वर के मंदिर के बारे म भी अच्छी जानकारी प्राप्त होती है एव चित्तौड की प्राकृतिक स्थिति का भी इसम अच्छा वर्णन किया गया है।

दूसरी शिला का एक छोटा सा टुकडा मिला ह। इसम 69 स 111 तक श्लोक दिये गये है। यह शिलालेख चित्तौड के वैष्णवो का तीर्थ स्थान होने के बारे मे प्रकाश डालता ह। इसम कुम्भा के समय के बाजारो, मंदिरो तथा राजमहलो का विस्तारपूर्वक वर्णन उपलब्ध है। इसके अंतिम 6 श्लोको मे वंश वर्णन किया गया है जिससे रावल शाखा और राणा शाखा म जो अन्तर है वह आसानी से समझ मे आ जाता है। इसके द्वारा बप्पा को विप्रवंशीय माना गया है।

तीसरी शिला म 121 स 184 तक श्लोक दिये गये है। इसम मेवाड के महाराणाओ की उपलब्धियो का अच्छा वर्णन किया गया है। इसम भी वंश वर्णन

है और लेखक ने बापा को फिर से विप्रवशीय माना है। इसके अनुसार हरीत ऋषि से ही बापा मेवाड के राज्य का विस्तार करने मे सफल हुआ। इसमे गुहिल को बापा का पिता माना गया है जो सन्देहात्मक है।

इससे खुमाण के राज्य विस्तार एव तुलादान के बारे म जानकारी प्राप्त होती है। इसके राज वरणन से पता चलता है कि वैरिसिंह ने आहाड के चारो ओर परकोट तथा चार गोपुर का निर्माण करवाया था। इससे कीतु तथा सामतसिंह के सघष के बारे मे भी जानकारी प्राप्त होती है। इससे यह भी मालूम होता है कि जब मेवाड का राणा रतनसिंह अल्लाउद्दीन खिलजी के विरुद्ध चित्तौड की रक्षा करते हुए मारा गया तो दुर्ग की रक्षा का भार लक्ष्मणसिंह, जो कि खुमाण का वशज था, के कन्धो पर आ गया। वह भी युद्ध करता हुआ मारा गया। इतना ही नही उस समय उसके सात पुत्र भी दुग की रक्षा करते हुए वीर गति को प्राप्त हुए। इससे मालूम होता है कि उस समय मेवाड के चार विभाग थे। (1) चित्तौड (2) आघाट (3) मेवाड एव (4) बागड। इस शिलालेख से हम दास प्रथा, आश्रम व्यवस्था धमशाला तपस्या, वैदिक यज्ञ एव शिक्षा व्यवस्था आदि सामाजिक सस्थाओ के बारे मे जानकारी प्राप्त होती है।

चौथी शिला से हम्मीर के चेलावट विजय के बारे म जानकारी प्राप्त होती है। यह राणा के तुलादान व विजयो पर भी प्रकाश डालती है। इसम कुम्भा की विजयो का अच्छा वणन किया गया है। इससे पता चलता है कि कुम्भा न मडोवर यनपुर हमीरपुर, वद्ध मान, सपादलक्ष, माडलगढ, सारगपुर, सिंहपुरी एव रणस्तम्भ आदि प्रदेशो पर विजयें प्राप्त की थी। इससे यह भी मालूम होता है कि कुम्भा ने महाराजाधिराज 'रायरायन' 'राणेरासो' (साहित्यकारो का आश्रयदाता) आदि उपाधिया धारण की थी। इसके अतिरिक्त इसमें कुम्भा द्वारा विभिन्न स्थानो पर बनवाये गये दुर्गों, मन्दिरो एव राजप्रासादो का वणन मिलता है।

11 कीर्ति स्तम्भ (चित्तौड) प्रशस्ति (1460 ई)

मेवाड के महाराणा कुम्भा ने मालवा और गुजरात की विजय के उपलक्ष म चित्तौड मे जय स्तम्भ (विजय स्तम्भ) का निर्माण करवाया था। टॉड ने लिखा है कि "मेवाड राज्य मे 84 दुग है। उनम मे 32 दुग राणा कुम्भा ने बनवाये है। कला की दृष्टि म उसका कीर्ति स्तम्भ[1] कुतुबमीनार से भी श्रेष्ठ माना जाता है।' डॉ शर्मा ने लिखा है कि "कुम्भा का जय स्तम्भ चित्तौड दुग की स्थापत्य और उत्कीर्ण कला का प्रमुख प्रतीक है।'[2] हरविलास शारदा ने विजय स्तम्भ के बारे मे लिखा है, "कुम्भलगढ व चित्तौड का कीर्ति स्तम्भ उन नमूनो म स एक है जो राणा कुम्भा की एक सेनानायक महान शासक व निर्माता के रूप म सदा याद

1 महाराणा कुम्भा द्वारा निर्मित विजय स्तम्भ शिलालेखो म कीर्ति स्तम्भ के नाम से प्रसिद्ध है।

2 शर्मा, जी एन — राजस्थान के इतिहास के स्रोत

दिलात रहेगे।"[1] कीर्ति स्तम्भ के निर्माण म 20 वप (1440 स 1460 ई) का समय लगा। श्यामलदास ने इस सम्बन्ध म लिखा है, "10 करोड से अधिक रुपये लग गये। यह स्तम्भ एक 42 फुट लम्बे, 42 फुट चौडे चबूतर पर जो जमीन से 12 फुट ऊचा है उस पर खडा है। इस स्तम्भ की ऊचाई 122 फुट है और घरातल पर चौडाई 20 फुट है। इसकी नौ मजिलें है। ऊपर जाने के लिए अन्दर सीढियाँ है। हर मजिल म चारो दिशाओ म भरोखे है। स्तम्भ म पाच लेख भी स्थापित किये गय थे। सार स्तम्भ म हर चप्प पर दवी देवताओ की मूर्तिया सजाइ गई ह।"

कला पारखी परसी ब्राउन ने कीर्ति स्तम्भ के बारे म लिखा है, "चित्तौड का कीर्ति स्तम्भ उसकी ख्याति के चिरस्थायी रूप म सदा बना रहेगा। यह रोम के टावर से अधिक महत्वपूर्ण व कलापूर्ण है।" उसने आगे लिखा है, "जिस प्रकार ताजमहल मुगल वैभव का एक मात्र प्रतीक संसार को आश्चय म डाल देता है वैसे ही राजपूत वीरो के शौय का प्रतोक कीर्ति स्तम्भ विश्व को मेवाड की गाथा सुनाने के लिए पर्याप्त है।" जिस प्रशस्ति का हम अध्ययन करने जा रहे है वह प्रशस्ति चित्तौड के दुग म कीर्ति स्तम्भ के पास स्थित है। यह लेख 1460 ई का है। इसका रचियता महेश था, जो कि केशव का पुत्र था। ऐसा माना जाता है कि कुम्भलगढ प्रशस्ति एव कीर्ति स्तम्भ प्रशस्ति का रचियता एक ही व्यक्ति था। इसलिये इस प्रशस्ति म कुम्भलगढ प्रशस्ति की बहुत सी घटनाए दोहराई गई है। इतना होने पर भी इस प्रशस्ति की अपेक्षा कुम्भलगढ की प्रशस्ति अधिक विस्तारपूवक लिखी हुई ह। यह प्रशस्ति कई शिलाओ पर लिपिबद्ध थी परन्तु अब केवल दो ही शिलाए उपलब्ध है, शेष शिलाए नष्ट हो चुकी है।

ऐतिहासिक महत्व

पहला शिला मे 1 स 28 तक श्लोक दिये गय हैं, जब कि दूसरी शिला म 162 से 187 तक श्लोक है। प्रारम्भ मे दो श्लोको मे शिव और गणेश की स्तुति की गई है। इसके 3 से 8 तक के श्लोको मे बापा की उपाधियो का वणन किया गया है। इससे पता चलता है कि बापा एक पराक्रमी शासक था। और उसका ईष्टदेव शिव था। इसके बाद हम्मीर की चेलावट विजय का वणन किया गया है। खेता ने अमीशाह एव रणमल को पराजित किया था। इसके बाद उसने मेदा को पराजित कर तीर्थस्थल गया को उनके कब्जे से मुक्त करवाया। इसके पश्चात् मोकल की उपलब्धियो का वणन किया गया है।

इससे पता चलता है कि कुम्भा ने आबू बसन्तपुर सपादलक्ष एव नराणा आदि प्रदेशों पर विजय प्राप्त की थी। एव कुम्भा ने माण्डव्यपुर से हनुमान की मूर्ति

---

1 शारदा, हरविलास—महाराणा कुम्भा, पृष्ठ 135

लाकर उसकी स्थापना 1515 ई मे दुग के प्रमुख द्वार पर करवाई और उसने एकलिंगजी के मन्दिर के पूव की ओर कुम्भ मण्डप का निर्माण करवाया। इससे पता चलता है कि सामरिक दृष्टि से आबू पवत मेवाड के लिये उपयोगी था। अत कुम्भा ने आबू का विजय किया। और इसकी सुरक्षा के लिये बहादुर घुडसवारो को रखा। इतना ही नही उसने उसकी विजय से पूव आबू म जो विभिन्न प्रकार के कर लगे हुए थे, उन्हें समाप्त कर दिया।

इसके बाद इसम कुम्भा की मालवा गुजरात एव खण्डेला आदि विजयो का वणन है। लेखक न मागल प्रदश, खण्डेला और धुकराद्रि आदि प्रदेशो की प्राकृतिक स्थिति का भी अच्छा वणन किया है।

इसम चित्तौड मे बने हुए मन्दिरो, मार्गों, जलाशयो और द्वारो का अच्छा वणन किया गया है। लेखक न चित्तौड के सरोवरो का वणन करते हुए युवतियो की तुलना कमलो से की है एव कुम्भश्याम के मन्दिर की तुलना कैलाश पवत तथा सुमेरु से की है। यह वणन लेखक ने अतिशयोक्तिपूवक किया है। इसके बाद कुम्भलगढ तथा नागपुर के बारे म वणन किया गया है।

इस लेख से पता चलता है कि कुम्भा ने चण्डीशतक, गीत गोविन्द की टीका, सगीतराज एव कई नाटको की रचना की थी। इतना ही नही उसन मालवा और गुजरात की सम्मिलित सेनाओ को भी परास्त किया था। यह वणन हमे अन्यत्र कही नही मिलता। इससे हम अचलगढ, कुम्भनगढ और कीर्ति स्तम्भ (चित्तौड) आदि के मन्दिरो म मूर्तियो की जो प्रतिष्ठा हुई थी उनस सम्बन्धित तिथियो के बारे मे जानकारी प्राप्त होती है। इसकी अन्तिम पक्तियो से पता चलता है कि इस प्रशस्ति का रचियता महेश भट्ट था। इसम हम 15वी शताब्दी के राजस्थान की सामाजिक, धार्मिक, राजनीतिक एव सास्कृतिक स्थिति के बारे म जानकारी प्राप्त होती है।

12 रायसिंह की प्रशस्ति (1594 ई)

यह लेख 1594 ई का है जो सस्कृत भाषा म लिपिबद्ध है। इसकी रचना जइता नामक एक जैन मुनि ने की थी जो क्षेमरत्न का शिष्य था। बीकानेर दुग के पूर्ण हो जान के बाद महाराजा रायसिंह की आज्ञा से इस प्रशस्ति को इस दुग के मुख्य द्वार पर लगा दिया गया था।

ऐतिहासिक महत्व

(i) इससे तत्कालीन सस्कृत भाषा की स्थिति के बारे मे जानकारी प्राप्त होती है।

(ii) इससे बीकानेर के शासक बीका से लेकर रायसिंह तक के शासको की उपलब्धियो पर प्रकाश पडता है।

(iii) इसकी 60वी पक्ति से रायसिंह के कार्यों के बारे मे जानकारी मिलती है। इससे पता चलता है कि रायसिंह ने काबुल, सिन्ध और कच्छ पर विजय प्राप्त

की थी। इतना ही नही वह स्वय विद्या प्रेमी, एव अच्छा कवि था। और उसने अपने दरबार मे कई विद्वानो को आश्रय दिया था। वैसे तो वह सभी धर्मों को आदर की दृष्टि से देखता था परन्तु हिन्दू धर्म मे उसकी असीम आस्था थी। रायसिंह ने कन्धार, काबुल और गुजरात के आक्रमण के समय म जिस प्रकार के शौर्य और धैर्य का परिचय दिया, उसका इसमे अच्छा वर्णन किया गया है।

(iv) इससे यह भी पता चलता है कि बीकानेर का महाराजा रायसिंह भवन निर्माण कार्यों म रुचि रखता था।

13 जमवा रामगढ़ प्रस्तर लेख (1613 ई)

यह लेख 1613 ई का है। इससे पता चलता है कि आमेर का शासक मानसिंह अपने पिता भगवन्तदास का दत्तक पुत्र था।

14 जगन्नाथराय की प्रशस्ति (1652 ई)

यह प्रशस्ति उदयपुर के जगदीश मन्दिर के प्रवेश मार्ग के दोनों तरफ काले पत्थरो पर खुदी हुई है। यह लेख 1652 ई म लिपिबद्ध करवाया गया था। इस लेख से मेवाड के इतिहास के बारे मे महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त होती है। इसकी रचना तलग ब्राह्मण कृष्ण भटट ने की थी जो मेवाड के महाराणा जगतसिंह द्वारा कई बार सम्मानित किया गया था।

ऐतिहासिक महत्व

(i) इससे बापा से लेकर जगतसिंह तक के शासको की उपलब्धियो पर प्रकाश पडता है। इसम प्रताप और अकबर के सघर्ष का अच्छा वर्णन है। इतना ही नही औरगजेब और राजसिंह के सघर्ष के बारे म इससे जानकारी मिलती है। हो सकता है कि इसका कुछ वर्णन एक पक्षीय हो। परन्तु यह लेख पर्शियन इतिहासकारो के पक्षपातपूर्ण वर्णन के सामने दूसरा पहलू हमारे सामने रखता है। इन शिलालेखो को मध्यनजर रखते हुए हम पर्शियन इतिहासकारो द्वारा लिखित घटनाओ का अधिक आलोचनात्मक ढग से अध्ययन कर सकते हैं।

(ii) इसस हमे जगतसिंह की दान पुण्यो मे रुचि के बारे म पता चलता है। इतना ही नही यह लेख उस समय की शिक्षा सम्बन्धी प्रगति पर भी प्रकाश डालता है।

(iii) इसस पता चलता है कि जगदीश मन्दिर के सूत्रधार भाणा और उसका पुत्र मुकुन्द था जिन्हे मन्दिर के कार्य को पूरा करने के उपलक्ष मे सोने और चादी के गज तथा चित्तौड के पास का एक गाव मेवाड के महाराणा द्वारा दिया गया था।

15 राज प्रशस्ति महाकाव्य (1676 ई)

मेवाड क महाराणा राजसिंह ने 17वी शताब्दी म राजसमुद्र मे एक कृत्रिम झील का निर्माण करवाया था। राजसमुद्र उदयपुर से 40 मील की दूरी पर स्थित है। यह झील 4½ मील लम्बी और 1¾ मील चौडी है। इसका निर्माण 1664 ई में

प्रारम्भ हुआ था । गोमती नदी के जल को बडे-बडे पवतो के बीच बाधकर इसका निर्माण किया गया । इससे पूव मेवाड के महाराणा उदयसिह ने यहा पर बाध बनवाने का प्रयास किया था जिसमें उन्हे सफलता नही मिली ।

महाराणा राजसिह की आज्ञा से रणछोड भट्ट ने इस महाकाव्य की सस्कृत भाषा मे रचना की । इसकी रचना मे लेखक को दो दशक का समय लगा होगा । ग्रथ की रचना के पश्चात् 1687 ई म इस महाकाव्य को 25 बडी बडी काले पत्थर की शिलाओ पर खुदवाकर राजसमुद्र झील के तट पर ताको मे लगवा दिया गया था । छठी शिला को पढने से पता चलता है कि इस महाकाव्य को पत्थर की शिलाओ पर खुदवाकर झील के तट पर लगवाने के आदेश राजसिह के उत्तराधिकारी महाराणा जयसिह के द्वारा दिय गय थे । आज भी ये शिलाए इस झील के तट पर विद्यमान हैं ।

इस प्रशस्ति की प्रत्येक शिला की लम्बाई 3 फीट और चौडाई 2½ फीट है । इसमे 1106 श्लोक है जो 24 सर्गो मे विभाजित है । इस महाकाव्य के रचयिता का प्रमुख उद्देश्य महाराणा राजसिह की उपलब्धियो पर प्रकाश डालना था । परन्तु प्रसगवश रणछोड भट्ट ने मेवाड के राजवश राजसिह की उपलब्धिया, मेवाड की सभ्यता तथा सस्कृति उस काल की युद्धकला, शिल्पकला, वेशभूषा, मुद्रा, दान प्रणाली एव धार्मिक जीवन का भी विस्तार से वणन किया है। इसके अतिरिक्त रणछोड भट्ट ने अधिकाश घटनाओ का वणन अपनी व्यक्तिगत जानकारी के आधार पर किया है । इसलिए ऐतिहासिक साधन के रूप मे इस महाकाव्य का महत्व और अधिक बढ जाता है ।

वीरविनोद के लखक श्यामलदास ने अपने ग्रथ म इस महाकाव्य का प्रयोग किया और इसे प्रकाशित भी करवाया परन्तु इसम कई अशुद्धिया रह गई । इसलिए डॉ पी एन चक्रवर्ती और बी छाबडा ने इसको सम्पादित किया एव इस एपिग्राफिया इण्डिका म अपना यह सम्पादन प्रकाशित करवाया परन्तु उसमे भी कई अशुद्धिया रह गई थी । प्रोफेसर एस आर शर्मा ने भी इस महाकाव्य पर एक लेख लिखकर उसे अग्रेजी भाषा मे प्रकाशित करवाया था । इतना ही नही उन्होने जब मेवाड के महाराणा राजसिह पर पुस्तक लिखी तब इस महाकाव्य का उन्होने अपनी पुस्तक मे एक प्रमुख साधन के रूप मे प्रयोग किया है । इसके बाद डा मोतीलाल मेनारिया ने इस महाकाव्य का सम्पादन किया था, जिसे 'राजप्रशस्ति महाकाव्यम्' के नाम से 1973 ई म साहित्य सस्थान, राजस्थान विद्यापीठ उदयपुर ने प्रकाशित कर दिया है ।

प्रथम सग म 31 श्लोक है । इसके 9–10वें श्लोक स पता चलता है कि जिस समय राजसमुद्र झील का निर्माण काय शुरू हुआ था उस समय महाराणा राजसिह गोगुन्दा मे थे । इसी समय रणछोड भटट न राज प्रशस्ति की रचना शुरू कर दी थी । इसके अन्तिम चार श्लोको मे लेखक न अपन वश वक्ष के बारे म वणन किया है ।

दूसरे सर्ग में 38 श्लोक दिए गए है। इससे सूर्यवंशी राजाओं की वंशावली के बारे में जानकारी प्राप्त होती है। इसमें मनु से विजय तक के शासकों का वर्णन किया गया है इस प्रकार यह सर्ग 135 पीढियों पर प्रकाश डालता है।

तीसरे सर्ग में 36 श्लोक है। इसके 18वें श्लोक से पता चलता है कि बापा ने मौरी जाति के मनुराज को युद्ध में परास्त किया और इसके बाद ही उसका चित्रकूट (चित्तौड) पर अधिकार हो सका। इस विजय के उपलक्ष में उसने 'रावल' की उपाधि धारण की। बापा रावल के वंशज समरसिंह ने चौहान शासक पृथ्वीराज तृतीय की बहिन पृथा से विवाह किया था। इसलिए उसने तराइन के युद्ध में मुहम्मद गौरी के विरुद्ध पृथ्वीराज चौहान का साथ दिया था। राजप्रशस्ति के श्लोक 25 से 27 के अनुसार यह पता चलता है कि समरसिंह तराइन के युद्ध में पृथ्वीराज चौहान की ओर से लडता हुआ वीरगति को प्राप्त हुआ था। माहप ने डूंगरपुर में स्वतन्त्र राज्य स्थापित करने में सफलता प्राप्त की, जो कि समरसिंह का पौत्र था।

चौथे सर्ग में 50 श्लोक हैं। इस सर्ग के चौथे श्लोक के अनुसार चित्तौड का शासक पदमनी का पति रतनसिंह न होकर उसका बडा भाई लक्ष्मणसिंह था जो अपने 12 भाइयों और 7 पुत्रों के साथ अलाउद्दीन खिलजी के विरुद्ध संघर्ष करता हुआ वीरगति को प्राप्त हुआ था। इसी सर्ग के 15वें श्लोक से पता चलता है कि महाराणा कुम्भा के 1600 स्त्रियाँ थी। 16वें श्लोक के अनुसार सांगा के नेतृत्व में 80 लाख सैनिकों ने खानवा के युद्ध में भाग लिया था। 21वें और 22वें श्लोक से पता चलता है कि भोजन के समय मानसिंह और प्रताप के बीच कुछ अनबन हो गई थी इसलिए मानसिंह ने मुगल सेना के साथ प्रताप पर आक्रमण किया था। 26 से 31वें श्लोक से पता चलता है कि राणा प्रताप का भाई शक्तिसिंह हल्दीघाटी के युद्ध के समय मुगल सेना के साथ मौजूद था। जब प्रताप युद्ध स्थल से भागा तब उसने प्रताप की सहायता की थी। कवि ने इस सर्ग के अन्तिम श्लोकों में प्रताप के यश एवं बहादुरी का शानदार वर्णन किया है।

पांचवें सर्ग में 52 श्लोक है। इस सर्ग के चौथे श्लोक से पता चलता है कि महाराणा अमरसिंह ने ऊँटाला (आधुनिक वल्लभनगर) गाँव में मुगल सेनापति कायम खाँ को मौत के घाट उतार दिया था। इसके पश्चात् उन्होंने मालपुरा को लूटकर वहाँ से कर वसूल किया। मेवाड के महाराणा अमरसिंह और शाहजादा खुर्रम के बीच हुई 1615 ई. की संधि का इसमें अच्छा वर्णन किया गया है। महाराणा कर्णसिंह, जो कि अमरसिंह का पुत्र था, ने शाहजादा खुर्रम को बागी होकर चार महीने तक अपने यहाँ आश्रय दिया था। इस सर्ग के 26वें श्लोक से पता चलता है कि कर्णसिंह के पुत्र जगतसिंह ने 'मर मन्दिर' तथा पिछोला झील के तट पर मोहन मन्दिर नामक महलों का निर्माण करवाया था। इसके 51वें श्लोक में मेवाड के शासकों की उदयसिंह से लेकर जयसिंह तक के वंशावली के बारे में जानकारी प्राप्त होती है।

छठे सर्ग मे 46 श्लोक हैं। इससे पता चलता है कि मेवाड के महाराणा राजसिंह का राज्याभिषेक 1652 ई म हुआ था और जयसिंह, भीमसिंह, गजसिंह सूरजसिंह, इन्द्रसिंह एव बहादुरसिंह आदि उनके पुत्र थे। राजसिंह की एक अविवाहित पत्नी की कोख से नारायणदास नामक लड़का पैदा हुआ था। इसके अतिरिक्त उसने सवतुविलास नामक उद्यान का भी निर्माण करवाया था। इसम शाहजहां के मन्त्री सादुल्लखां और मधुसूदन भट्ट (रणछोड भट्ट का पिता) म जो वार्ता हुई, उसका विस्तार से वणन किया गया है। सातवें सग म 45 श्लोक है। इसमे राजसिंह की विजया का वर्णन किया गया है। इसके अतिरिक्त इसम उनके स्वागत के लिए सजाए गए उदयपुर नगर की शोभा के बारे म वणन किया गया है।

आठवें सग मे 45 श्लोक है। इस सर्ग के अनुसार औरगजेब ने 1657 ई म जब राज्याभिषेक के समय दिल्ली की ओर प्रस्थान किया तब मेवाड के महाराणा राजसिंह का भाई अरीसिंह सिहनद तक उसके साथ था। इसी समय औरगजेब ने डूगरपुर की जागीर का फरमान राजसिंह के नाम जारी किया था। जब औरगजेब ने अपने भाई शुजा के विरुद्ध खजुआ का युद्ध लडा तो उस समय राजसिंह ने अपने पुत्र सरदारसिंह को मेवाडी सेना के साथ औरगजेब की सहायता के लिए भेजा था। 31वें सर्ग के अनुसार राजसिंह ने किशनगढ के राठौड शासक रूपसिंह की पुत्री चारुमति से विवाह किया था। 32वें और 33वें श्लोक के अनुसार राजसिंह न मवल देश (मेरवाडा) पर अधिकार करने के पश्चात् वहा अपने सामन्तो को बसाया था। 1664 ई मे सूय ग्रहण के समय महाराणा राजसिंह ने हिरण्य कामधेनु महादान दिया था।

नवें सग म 48 श्लोक हैं। इससे राजसमुद्र के निमाण एव प्रतिष्ठा के बारे म पता चलता है।

दसवें सर्ग म 43 श्लोक है। इसके अनुसार काकरोली मे सेतु का निर्माण करवाया गया था और राजमन्दिर नामक एक अनुपम 'राजाप्रसाद' का निर्माण भी उसी समय किया गया था, जो सुवण शैली पर आधारित था। 1672 ई मे चन्द्र ग्रहण के अवसर पर कल्पलता नामक दान दिया गया था। मत्स्य पुराण के अनुसार इस दान को सम्पन्न करने के लिए विभिन्न फल एव पुष्पो की दस सोने की आकृतियां का निर्माण किया गया था, जिसमे से दाता ने दो आकृतियां गुरु एव आठ पुरोहितो को दान मे दे दी थी। ग्यारहवें सर्ग म 57 श्लोक है। इसस राजसिंह के सुवण पृथ्वी महादान एव विश्व चक्र महादान आदि महादानो के बारे म जानकारी मिलती है। इसमे यह भी पता चलता है कि राजसमुद्र की नौकाओं को देखने के लिये गुजरात, सूरत और लाहौर आदि देशो के सूत्रधार आये थे।

तेरहवे सर्ग मे 42 श्लोक है। इससे राजसमुद्र की प्रतिष्ठा के समय निमन्त्रण देकर बुलाये गये राजाओ और किलेदारो के बारे म जानकारी प्राप्त होती है। चौदहवें सग म 40 श्लोक हैं। इसमे दान दक्षिणा क बारे मे वणन किया गया

है तथा इससे यह भी जानकारी प्राप्त होती है कि राव इन्द्रभान परमार की पुत्री सदाकुवरी महाराणा राजसिंह की पटरानी थी। पन्द्रहवें सर्ग म 39 श्लोक हैं। इससे राजसमुद्र झील की प्रतिष्ठा के समय किये गये पूजा विधान पर प्रकाश पड़ता है।

सोलहवें सर्ग म 60 श्लोक है। इस सर्ग के प्रथम श्लोक के अनुसार महाराणा उदयसिंह ने 1565 ई के दिन उदयसागर झील की प्रतिष्ठा की था। मेवाड के महाराणा राजसिंह न भी राजसमुद्र झील की प्रतिष्ठा स पूर्व 6 दिन तक उपवास रखा था। यह जानकारी भी हमे इसी सर्ग से मिलती है। सत्रहवें सग म 41 श्लोक हैं। इससे पता चलता है कि तुलादान के समय बारह हजार तोला सोना दान में दिया गया था।

अठारहवें सर्ग म 40 श्लोक है। इसमे दान के बारे म वर्णन है। श्लोक 34 से 36 तक का अध्ययन करने से पता चलता है कि कांकरोली (राजसमुद्र के पास एक गांव है) में यवन- त्रस्त द्वारकेश का आगमन हुआ था।

उन्नीसवें सर्ग म 43 श्लोक है। शुरू के 21 श्लोको म राजसमुद्र के बारे म वर्णन किया गया है। इससे पता चलता है कि 46 हजार ब्राह्मणो को दान दक्षिणा दी गयी थी।

बीसवें सर्ग म 55 श्लोक है। इसके अनुसार मेवाड के महाराणा राजसिंह ने आमेर के शासक रामसिंह कछवाहा, जोधपुर के जसवन्तसिंह बूदी के भावसिंह हाडा, बीकानेर के अनूपसिंह, रामपुरा के मोहकमसिंह च द्रावत बाधव के भावसिंह एव जैसलमेर के रावल अमरसिंह भाटी को एक एक हाथी, दो दो घोडे, और बहुमूल्य सुन्दर वस्त्र भेजे थे। इनकी कुल कीमत 78526 रु थी। इससे पता चलता है कि महाराणा ने डूगरपुर के रावल जसवन्तसिंह को 6500 रु मूल्य के उपहार भेजे थे। इतना ही नही अन्य चारणो, भाटो, कवियो, पण्डितो एव सरदारो को भी उपहार भेजे गये थे।

इक्कीसवें सर्ग मे 45 श्लोक है। यह सर्ग राजसिंह के शौर्य, पराक्रम एव दानशीलता पर प्रकाश डालता है। राजसिंह के द्वारा 1677 ई म अपने जन्मदिन को शानदार ढग से मनाया गया था। इसी अवसर पर उन्होने कल्पद्रुम और हिरण्याश्व महादान किये थे। इस सर्ग से पता चलता है कि महाराणा राजसिंह ने राव बैरीसाल को सिरोही का शासक बनाने मे सहयोग दिया था जिसके एवज म राव बैरीसाल ने उनको एक लाख रु और कोरटा आदि पाच गाव दिय थे।

बाईसवें सर्ग म 50 श्लोक है। इसके अनुसार राजकुमार जयसिंह ने 1678 ई म औरगजेब से दिल्ली मे भेंट की थी। इससे यह भी पता चलता है कि औरगजेब ने 1679 ई मे मेवाड पर आक्रमण किया था तथा उसने अभियान के दौरान अनेक मन्दिरो को गिरवा दिया था। इसका बदला राजसिंह के पुत्र भीमसिंह ने अहमदाबाद की एक बडी मस्जिद और 300 छोटी मस्जिदो को गिराकर लिया था।

तईसवें सग म 62 श्लोक है। इसस राजसिह की मृत्यु तथा जयसिह के राज्याभिषेक पर प्रकाश पडता है। इसमे जयसिह द्वारा शाहजादा आजम से भेंट, अकबर और तव्वर खा के साथ राजपूतों का समझौता एव अकबर के विद्रोह का वर्णन किया गया है। इससे यह भी पता चलता है कि अन्त मे मेवाड के महाराणा जयसिह ने मुगल सम्राट औरगजेब से सन्धि कर ली। चौबीसवें सग म 36 श्लोक है। इसस मेवाड के महाराणा राजसिह और उसके परिवार के सदस्यो के द्वारा किये गये तुलादानो के बारे मे जानकारी प्राप्त होती है। इस सग के 25 से 27 वें श्लोक तक दयालदास के शौय एव साहस के बारे मे वर्णन किया गया है। अन्त म राजसिह की प्रशसा मे मेवाडी बोली मे निम्न दो सोरठो का वर्णन है—

राणो कोइ राजपूत, जे वडता जाया नहर।
समदा फेरण सूत, राणा तु हिज राजसी॥
ऐ जो औरग काह मेगक मुगला मारिजे।
राणो राखोराह, रजवट भरियो राजसी॥

इस प्रशस्ति म सवतों के साथ ऐतिहासिक घटनाओ का वर्णन है। इसके प्रथम पाच सर्गों से मेवाड के प्राचीन इतिहास के बारे म जानकारी प्राप्त होती है। यह इतिहास रण छोड भट्ट ने दन्त कथाओ और रयातो को आधार बनाकर लिखा है। इसकी पुष्टि के लिये कुछ उदाहरण नीचे दिये जा रहे है—

(I) रणछोड भट्ट न इस प्रशस्ति म लिखा है कि जिस समय अलाउद्दीन ने चित्तौड पर आक्रमण किया था तो उस समय रतनसिह चित्तौड का शासक नही था।

(II) चौथे सग से पता चलता है कि प्रताप और मानसिह के बीच वैमनस्य होने के कारण ही मानसिह मुगल सेना के साथ प्रताप पर आक्रमण करन के लिये आया था। हल्दी घाटी के युद्ध मे राणा प्रताप के भाई शक्तिसिह ने मुगल सेना का साथ दिया था। परन्तु जब प्रताप युद्ध का मैदान छोडकर भागा तो ऐसे समय मे शक्तिसिंह मानसिह से स्वीकृति प्राप्त कर उसके पीछे पीछे रवाना हुआ। इसी समय दो मुगल सनिक प्रताप का पीछा कर रहे थे तो शक्तिसिंह मे भ्रातृत्व प्रेम जाग्रत हुआ और उसने इन दोनो सनिको को मौत के घाट उतार दिया। इस प्रशस्ति के 31 वें श्लोक के अनुसार अकबर स्वय भी प्रताप से युद्ध करने गया था परन्तु उसने प्रताप को अपने से अधिक बहादुर समझा इसलिय वह स्वय तो आगरा की ओर रवाना हुआ और युद्ध का नेतृत्व अपने पुत्र शेखू को दे दिया।

ऐतिहासिक महत्व

इस प्रशस्ति के पिछले सर्गों से महत्त्वपूर्ण ऐतिहासिक जानकारी प्राप्त होती है क्योकि लेखक ने उन घटनाओ को व्यक्तिगत जानकारी के आधार पर लिखा है। इसके कुछ उदाहरण नीचे दिये जा रहे हैं—

महाराणा उदयसिंह न उदयसागर झील की प्रतिष्ठा 1672 ई० मे की था। पाचवें सग म ग्रमरसिंह ग्रौर जहांगीर न बीच हुई सधि का वरान है तथा कर्णसिंह के गुरम म साथ मैत्रीपूर्ण सम्बन्धो के बारे मे भी जानकारी प्राप्त होती है।

प्रशस्ति के रचियता रणछोड भट्ट ने महाराणा जगतसिंह ग्रौर महाराणा राजसिंह का इतिहास ग्रपनी व्यक्तिगत जानकारी के ग्राधार पर लिखा है। इसलिए डॉ जी एन शर्मा ने लिखा है कि "इस प्रशस्ति का ऐतिहासिक उपयोग जगतसिंह व राजसिंह के लिए ग्रत्यधिक है।"[1] डॉ व्यास ने लिखा है, "इन प्रशस्ति ने राजसिंह के इतिहास को ग्रमर बना दिया।"[2]

छठे सग म राजसिंह की धमपरायणता, दानशीलता, निर्माण कार्यों के बार म जानकारी प्राप्त होती है। ग्राठवें सग स पता चलता है कि उजवा के युद्ध म राजसिंह ने ग्रौरगजेब की सहायता हेतु ग्रपने कु वर सरदार सिंह को भेजा था, जिसने ग्रौरगजेब के पक्ष म सक्रिय भाग लिया। जब ग्रौरगजेब इस युद्ध म विजयी हुग्रा तो उसने इस उपलक्ष मे राजसिंह को भेंट गज ग्रौर ग्रश्व प्रदान किये थे।

इस प्रशस्ति के ग्रनुसार ग्रकाल पीडितो की सहायता के लिये ही राजसमुद्र झील का निर्माण प्रारम्भ किया गया था। ग्रोझा ने लिखा है कि "महाराणा राजसिंह के शिल्प सम्बन्धी कामो म सबसे ग्रधिक महत्व का काय राजसमुद्र तालाब है।"[3] डा ग्रार जी व्यास लिखते है कि "ग्राज भी यह झील राणा के स्वण युग की याद दिलाती है।"[4] इससे राजसिंह की उपलब्धिया के बारे म जानकारी प्राप्त होती है। इसके ग्रतिरिक्त राजसिंह के ग्रौरगजेब के साथ मत्रीपूर्ण सम्बन्धो एव सघष के बारे मे जानकारी मिलती है। इसके बाद जयसिंह के समय ग्रौरगजेब से हुई सधि का भी इसमे उल्लेख है।

इस प्रशस्ति से 17 वी शताब्दी के राजनीतिक, ग्रार्थिक, सामाजिक एव धार्मिक जीवन पर भी प्रकाश पडता है।

यद्यपि यह महाकाव्य सस्कृत भाषा मे लिपिबद्ध है फिर भी इसम ग्ररबी, फारसी तथा उस काल म प्रचलित लोक भाषा के शब्दो का प्रयोग भी हुग्रा है।

प्रोफेसर एस० ग्रार० शर्मा ने इस प्रशस्ति के महत्व के बारे मे लिखा है कि

It gives a credible account of the relations of Maharana Rajsingh with the Mughal Emperors besides throwing a good deal of light on the social and religious customs of the period '

---

(1) शर्मा, जी एन —राजस्थान क इतिहास के स्रोत, प्रथम-भाग पृष्ठ 190
(2) व्यास ग्रार पी (डा)—महाराणा राजसिंह, पृष्ठ 73
(3) ग्रोझा गौरीशकर हीराचद उदयपुर राज्य का इतिहास, पृष्ठ 569
(4) व्यास ग्रार पी (डॉ)—महाराणा राजसिंह पृष्ठ 68

डॉ० मोतीलाल मेनारिया ने इसके ऐतिहासिक महत्व का वर्णन निम्न शब्दों मे किया है—

'मेवाड़ की संस्कृति, वेशभूषा, शिल्पकला, मुद्रा, दानप्रणाली, युद्धनीति, धर्म कर्म इत्यादि अनेकानेक अन्य वृत्तों पर भी इससे अच्छा प्रकाश पड़ता है।'

डॉ० गोपीनाथ शर्मा ने इस प्रशस्ति के महत्व के बारे में लिखा है कि 'झील का उपयोग सिंचाई के लिये कितना था और उससे कितने गांव प्रभावित थे इसका भी इसमें अच्छा ब्यौरा दिया गया है। उस समय के विवाह खेल, शिक्षा, निर्माण-कार्य, मुद्रा, सैनिक शिक्षा, पठन पाठन, समृद्धि, नगर योजना, उपवन, महल वस्त्र और रत्नों की विशेषता, धर्म, दान, व्यवसाय, निर्माणकार्य के साधन भोजन के प्रकार, सिरोपाव आदि विविध विषयों पर प्रशस्तिकार प्रकाश डालता है।"[1]

ओझा ने लिखा है, यह ग्रन्थ महाकाव्यों के समान कवि की कल्पना नहीं है। इसमें सभ्यता के साथ ऐतिहासिक घटनाओं का विवरण है, जो इतिहास के लिए बड़े उपयोगी है।'[2] डॉ० आर पी व्यास ने इस प्रशस्ति का महत्व बताते हुए लिखा है, 'राजप्रशस्ति काव्य संस्कृत की एक अमूल्य निधि होने के साथ ऐतिहासिक दृष्टि से भी अमूल्य व महत्वपूर्ण रचना है।"[3]

यह प्रशस्ति उस समय के राजपूतों के युद्ध कौशल एवं कूटनीति पर भी प्रकाश डालती है। निष्कर्ष रूप से कहा जा सकता है कि इस प्रशस्ति से न केवल ऐतिहासिक जानकारी ही प्राप्त होती है अपितु यह उस काल की कला एवं साहित्यिक स्तर पर भी प्रकाश डालती है।

अधिकांश शिलालेखों को समय समय पर विद्वानों ने संग्रहित करने के पश्चात उन्हें पुस्तकों में प्रकाशित करवा दिया है। जिन शिलालेखों से मध्यकालीन राजस्थान के इतिहास के बारे में जानकारी प्राप्त होती है उनको निम्न विद्वानों ने अपनी पुस्तकों में प्रकाशित करवा दिया है—

1 Muni Jin Vijay Prachina Jain lekh Sangraha
2 Dr D R Bhandarkar–Inscriptions of Northern India
3 P C Nahar–Jain Inscriptions
4 डॉ० मांगीलाल व्यास (मयंक)–मारवाड़ के अभिलेख

फारसी भाषा में लिपिबद्ध शिलालेख

दरगाह शरीफ में स्थित शाहजहानी मस्जिद से एक शिलालेख प्राप्त हुआ है। यह लेख 1637 ई० का है। इससे पता चलता है कि शाहजादा खुर्रम ने ख्वाजा

---

(1) शर्मा, जी० एन०–राजस्थान के इतिहास के स्रोत, पृष्ठ 191
(2) ओझा–उदयपुर राज्य का इतिहास, पृष्ठ 577
(3) व्यास, आर पी (डॉ)–महाराणा राजसिंह पृष्ठ 133

साहब की दरगाह की जियारत करते समय यह प्रतिज्ञा की थी कि यदि मुझे मेवाड अभियान म विजय प्राप्त हागी तो उसके पश्चात् मैं एक मस्जिद का निर्माण कर वाऊगा, इसलिये खुरम ने मेवाड की विजय के पश्चात् अपने प्रण के अनुसार अज मेर मे एक मस्जिद का निर्माण करवाया।

तारागढ पर सैय्यद हसन मसहदी की दरगाह बनी हुई है। वहा से दो शिलालेख प्राप्त हुए है जिनमे से एक 1807 ई० का है तथा दूसरा 1813 ई० का। इनसे पता चलता है कि दरगाह के दालान के निर्माता बालाजी इगलिया और राव गुमानजी सिंधिया थे। अजमेर के ढाई दिन के झोपडे से भी एक शिला लेख प्राप्त हुआ है। यह लेख 1200 ई० का है। अलाउद्दीन खिलजी अकबर और औरंगजेब के समय के शिलालेख सारे प्रदेश से प्राप्त हुए हैं। डॉ० मनजीतसिंह अहलूवालिया ने इन शिलालेखो पर "स्टडीज इन मेडीवल राजस्थान हिस्ट्री" नामक पुस्तक लिखी थी, जो 1970 ई० मे ही प्रकाशित हो गई थी।

(II) मुद्रायें

मुद्राओ से भी राजस्थान के इतिहास के निर्धारण म काफी सहायता मिलती है। ये सिक्के सोने, चाँदी, तांबे और मिश्रित धातुओ के बने हुए है तथा सिक्को पर अकित चिह्न, तिथिया, राजा का नाम, उसके इष्ट देव की मूर्तिया आदि अकित मिलते है जिससे हमे उस राजा की उपलब्धियो के बारे म जानकारी प्राप्त होती है। उस काल के धार्मिक जीवन पर भी प्रकाश पडता है। इसके अतिरिक्त इनसे तिथि सम्बन्धी विवाद की समस्या का समाधान भी आसानी से हो जाता है।

ये सिक्के राजनीतिक इतिहास एव राज्य की सीमा को निर्धारित करने म काफी सहायक सिद्ध होते है। इन सिक्को की बनावट से पता चलता है कि उस काल म कला कहा तक विकसित थी। सिक्को पर अकित शब्दो से उस समय की भाषा के बारे म जानकारी प्राप्त होती है। सिक्को की धातुएँ सोना चांदी और तांबा इत्यादि उस समय की समृद्धता एव असमृद्धता पर प्रकाश डालते हैं। इस प्रकार ये सिक्के उस काल की आर्थिक दशा के बारे म भी जानकारी देते है।

डॉ० गौरीशकर हीराचन्द ओझा ने 7 वीं शताब्दी म बापा के समय प्रचलित सिक्का के बारे मे वर्णन किया है। चौहान शासक अजयदेव के सिक्के के एक तरफ लक्ष्मी का चित्र तथा दूसरी तरफ उसका नाम खुदा हुआ है। इसी तरह सामेश्वर (चौहान शासक) के सिक्के के एक तरफ बैल और दूसरी तरफ उसका नाम खुदा हुआ है। चौहानों के पतन के साथ ही भारतीय मुद्रा कला का पतन काल शुरू हो जाता है।

प्रारम्भिक मध्यकालीन सिक्को मे गधिया शैली के सिक्के काफी मात्रा म प्राप्त हुए है। इनको गधिया इसलिये कहा जाता है क्योंकि इन सिक्कों पर अकित मूर्ति का मुह गधे जैसा दिखाई देता है। महाराणा कुम्भा, सांगा, रतनसिंह विक्रमादित्य और उदयसिंह के समय के सिक्के भी प्राप्त हुए हैं। इन सिक्कों म

उस समय की मेवाड की राजनीतिक, आर्थिक तथा मामाजिक अवस्था पर प्रकाश पडता है। ऐसा प्रतीत होता है कि जब मेवाड के महाराणा अमरसिंह ने 1615 ई मे मुगलो की अधीनता स्वीकार कर ली थी उसके पश्चात् मेवाड की टक्साल बन्द कर दी गई थी। उस समय जोधपुर, बीकानेर, प्रतापगढ मे अपनी अपनी टकसालें थी। कोटा मे माडू और दिल्ली के सुलतानो द्वारा जारी किये गये सिक्को का प्रचलन था। अकबर के बाद सभी देशो मे मुगल सिक्के प्रचलित हो गये। ओझा के ग्रन्थ "बासवाडा राज्य का इतिहास" से पता चलता है कि बासवाडा मे सालिमशाही सिक्के प्रचलित थे।

कभी कभी सिक्को द्वारा महत्वपूर्ण ऐतिहासिक जानकारी प्राप्त हो जाती है। एडवड थामस ने 'क्रानीकल्स ऑफ दी पठान किंग्स ऑफ दिल्ली" नामक पुस्तक लिखी है। इस पुस्तक के पृष्ठ 19 पर उन्होने 1192 ई० मे प्रचलित सिक्के का चित्र दिया है। इस सिक्के के एक तरफ मुहम्मद गौरी का नाम तथा दूसरी तरफ पृथ्वीराज चौहान का नाम लिखा हुआ है। इस सिक्के की प्राप्ति के पश्चात् चन्द बरदाई का पृथ्वीराज रासो मे यह लिखना कि तराइन के युद्ध के बाद मुहम्मद गौरी पृथ्वीराज चौहान को गजनी ले गया था, गलत सिद्ध हो चुका है। इस सिक्के से यह स्पष्ट हो जाता है कि तराइन के युद्ध के बाद मुहम्मद गौरी पृथ्वीराज को गजनी नही ले गया अपितु वह उसे अजमेर ले आया और पृथ्वीराज के द्वारा अधीनता स्वीकार करने पर गौरी ने उसका राज्य पुन उसे लौटा दिया था।

प्राप्त सिक्को को विद्वानो ने समय समय पर पुस्तको मे प्रकाशित करवा दिया है। ऐतिहासिक जानकारी देने वाले सिक्के निम्नलिखित पुस्तको मे खोजे जा सकते हैं—

1 Dr D R Bhandarkar—Inscriptions of Northern India
2 B N Reu —Coins of Marwar
3 P C Nahar—Jains Inscriptions
4 Muni jin Vijai ji—Prachin lekh Sangraha

(III) ताम्रपत्र

मध्यकाल म राजाओ एव जागीरदारो द्वारा भूमि के बारे म ताम्रपत्र प्रदान किया जाता था। इनसे पता चलता है कि किस राजा के द्वारा कब, किसको और क्यो ताम्रपत्र दिया गया था। इसके अतिरिक्त ताम्रपत्रों से उस समय की सामाजिक धार्मिक, आर्थिक और राजनीतिक व्यवस्था पर प्रकाश पडता है। डा० बी एस० भार्गव ने मसूदा के ताम्रपत्रो की खोज कर उनके ऐतिहासिक महत्व पर 1975 ई० म अजमेर मे आयोजित 'राजस्थान हिस्ट्री कांग्रेस' म एक पत्र पढा था। उनका वह पत्र एक लेख के रूप म राजस्थान हिस्ट्री कांग्रेस की प्रोसीडिग्स म प्रकाशित हो चुका है। डा० जी० एन० शर्मा न अपनी पुस्तक 'बिबलीयोग्राफी आफ मेडीवल राजस्थान के पृष्ठ 13-16 पर ताम्रपत्रो के महत्व के बारे म लिखा है।

(IV) स्मारक

मध्यकालीन राजस्थान के दुर्गों, नगरो, मन्दिरा, मूर्तियो, भवना, स्मारको, महलो, समाधियो से महत्वपूर्ण ऐतिहासिक जानकारी प्राप्त होती है। इनस जन जीवन के स्तर, धार्मिक, सामाजिक एव कला के विकास पर प्रकाश पडता ह।

चित्तौड, कुम्भलगढ, गागरोन, रणथम्भोर, जालोर, और आमेर क दुर्गों से जन साधारण के जीवन स्तर तथा राजपरिवार के बारे म जानकारी मिलती है। इतना ही नहीं, इनसे यह भी पता चलता है कि उस काल म सुरक्षा के साधन क्या थे और सैनिक व्यवस्था किस प्रकार की थी।

ऋषभदेव और नाथद्वारा आदि नगर तीर्थस्थल थे। धीरे धीरे ये नगर व्यापार और कला कौशल के केन्द्र बन गये। मध्यकाल म निर्मित देलवाडा का मन्दिर, नागदा के सास बहू के मन्दिर, उदयपुर का जगदीश मन्दिर, जयपुर का जगत शिरोमणि का मन्दिर न केवल उस काल की कला पर अपितु धार्मिक एव सामाजिक अवस्था पर भी प्रकाश डालते है। मूर्तियो के वस्त्र एव आभूषण आदि उस काल की समाज की वेश भूषा एव जीवन स्तर पर प्रकाश डालते है। भित्ति चित्रो से उस काल की चित्रकला के बारे म जानकारी प्राप्त होती है। राजनीतिक उथल पुथल को समझने हेतु एव तिथि क्रम को निर्धारित करने मे उस काल की इमारतो का भी महत्वपूर्ण योगदान है। इस प्रकार इतिहास के कलेवर को समृद्ध बनाने म पुरातत्व सामग्री ने बहुमूल्य योगदान दिया है।

2 ऐतिहासिक साहित्य

ऐतिहासिक साहित्य से हमे महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त होती है। इस साहित्य को निम्न भागो मे विभाजित किया जा सकता है

1 ख्यात साहित्य का ऐतिहासिक महत्व एव प्रमुख ख्यातें।
2 हिन्दी एव राजस्थानी भाषा मे लिपिबद्ध महत्वपूर्ण कृतिया।
3 उर्दू फारसी भाषा म लिपिबद्ध महत्वपूर्ण कृतियाँ।
4 सस्कृत भाषा मे लिपिबद्ध महत्वपूर्ण कृतियाँ।
5 जैन धर्म का साहित्य।
6 चित्र एव चित्रित ग्रन्थों का ऐतिहासिक महत्व।

1 ख्यात साहित्य का ऐतिहासिक महत्त्व एव प्रमुख ख्यातें

यद्यपि राजस्थान मे इतिहास से सम्बन्धित साहित्य की रचना 9वी शताब्दी मे प्रारम्भ हो चुकी थी तथापि 16वी शताब्दी से पहले रासो साहित्य ही अधिक लोकप्रिय था। उस समय के प्रसिद्ध साहित्य के अन्तगत पृथ्वीराज रासो, बीसलदेव रासो एव क्याम खाँ रासो का नाम लिया जा सकता है। जिस समय अकबर ने अबुल फजल को अकबरनामा लिखने का आदेश दिया उस समय उसने राजपूत राजाओ को भी उनके वश से सम्बन्धित ऐतिहासिक सामग्री मुगल दरबार मे भेजने के लिय कहा था, ताकि उस सग्रहित सामग्री को आधार बनाकर अबुल फजल अपने ग्रथो की रचना कर सकें। इसी समय ख्यात साहित्य की रचना शुरु हुई।

प्रोफेसर राधेश्याम त्रिपाठी के अनुसार ख्यात का शाब्दिक अथ ख्याति प्रतिपादित करना है। अर्थात् ख्यात कथित साहित्य है। उस काल मे अधिकाश ख्यात साहित्य की रचना गद्य मे की गई थी। ख्यात के लेखक का मुख्य उद्देश्य अपने आश्रयदाता की दैनिक जीवन की घटनाओ का वणन करना होता था। इस प्रकार भिन्न भिन्न लेखको द्वारा भिन्न भिन्न राज वशो के ऐतिहासिक साहित्य की रचना कर दी गई। प्रतिभाशाली शासको की ख्यातें भी लिखी गई, जैसे—उदाहरण के लिये—जोधपुर के महाराजा अजीतसिंह की ख्यात।

16वी शताब्दी के पश्चात राजस्थान म विशाल पैमाने पर ख्यात साहित्य की रचना की गई थी। उस समय ख्यातें चारण अथवा कायस्थ जाति के पचोली

के द्वारा लिखी गई थी। इस दृष्टि से नैणसी अपवाद था क्योंकि वह जाति से न तो चारण था, न ही पचोली। अधिकांश ख्यातें राज्याश्रय में लिखी हुई होने के कारण उनमें अतिशयोक्तिपूर्ण वर्णन किया गया है।

ख्यात साहित्य को निम्न दो भागों में बांटा जा सकता है

(i) जिसमें क्रमबद्ध रूप से इतिहास की रचना की गई हो उसे सलग्न ख्यात के नाम से पुकारा जाता है। ऐसी ख्यातों में दयालदास की ख्यातें, आमेर की ख्यात और जोधपुर राज्य की ख्यात आदि प्रमुख है।

(ii) जिन ख्यातों में अलग अलग बातों का संग्रह किया गया है, उन्हें बात संग्रह ख्यात के नाम से जाना जाता है। ऐसी ख्यातों में नैणसी की ख्यात और बांकीदास की ख्यात का नाम उल्लेखनीय है। दोनों ख्यातों में अन्तर सिर्फ इतना है कि नैणसी की ख्यात की बातें तीन-चार पृष्ठों में है, जबकि बांकीदास की बातें दो तीन पंक्तियों में ही समाप्त हो जाती है।

राजस्थान की ख्यातों से विभिन्न क्षेत्रों के बारे में ऐतिहासिक जानकारी प्राप्त होती है। अतः प्रोफेसर राधेश्याम त्रिपाठी ने ख्यातों को निम्न चार भागों में विभाजित किया है

(i) इतिहास परक ख्यात (ii) वार्तापरक ख्यात (iii) व्यक्तिपरक ख्यात एवं (iv) स्फुट ख्यात।

ख्यातों में नैणसी की ख्यात सबसे पुरानी है। इसके अतिरिक्त जोधपुर राज्य की ख्यात, मुण्डियार की ख्यात, आमेर की ख्यात, मेवाड़ की ख्यात, बांकीदास की ख्यात, दयालदास की ख्यात एवं शाहपुरा की ख्यात उल्लेखनीय है।

ख्यातों का ऐतिहासिक महत्व

श्री उदयराज उज्जवल ने ख्यातों के ऐतिहासिक महत्व के बारे में लिखा है कि "दीपैवारो देस ज्यारो साहित जगमगै" इसका अर्थ है कि जिस देश का साहित्य प्रकाशमान होता है वही देश अपनी संस्कृति की परम्परा को हमेशा उन्नति की ओर ले जाता है तथा संसार में उस देश को अत्यधिक आदर की दृष्टि से देखा जाता है।

मध्य काल में जो लिखित ख्यातें प्राप्त हुई है उनसे उस समय के सामन्तों, राजाओं, कर्मचारियों और राजनीतिक स्थिति के बारे में जानकारी प्राप्त होती है। अधिकांश विख्यात लेखकों ने अपने समय के राजाओं और रानियों का ही वर्णन किया है, इसलिये उनसे जनसाधारण के बारे में जानकारी प्राप्त नहीं होती है।

डा. ओझा, रेऊ, जगदीशसिंह गहलोत, और डॉ. रघुवीरसिंह ने जब राजस्थान के इतिहास का लेखन कार्य प्रारम्भ किया तब उन्होंने अपनी रचनाओं में ख्यात साहित्य की घटनाओं का प्रयोग किया। अभी जो रिसर्च स्कॉलर राजस्थान के इतिहास से सम्बन्धित विषय पर शोध कार्य कर रहे है वे सभी ख्यात साहित्य

का प्रयोग कर रहे है । इसका कारण यह है कि जिन घटनाओं के बारे मे फारसी साधनो मे जानकारी प्राप्त नही होती है उनका वर्णन ख्याता म प्राप्त हो जाता है । यही वजह है कि ख्यात साहित्य का ऐतिहासिक महत्व निरन्तर बढता जा रहा है । इसकी पुष्टि म हम यहा पर कुछ उदाहरण प्रस्तुत करेंगे—

1 शेरशाह और मालदेव के बीच 1544 ई म सुमेल नामक स्थान पर युद्ध हुआ था । इस समय शेरशाह का समकालीन इतिहासकार अब्बास खा सरवानी युद्ध क्षेत्र मे उसकी सेना म मौजूद था । उसने अपनी पुस्तक तारीखे शेरशाही' मे कही पर भी यह नही लिखा कि दोनो (शेरशाह एव मालदव) के बीच युद्ध किस स्थान पर हुआ था और क्या मालदेव के सनिकों ने ही शेरशाह के विरुद्ध युद्ध मे भाग लिया था । अब्बास ने अपने ग्रन्थ मे सिफ यही लिखा है कि शेरशाह ने पडाव से पहले बोरो म रेत भरवा कर सुरक्षा की व्यवस्था कर दी थी ।

मारवाड एण्ड मुगल एम्परस के लेखक डा वी एस भागव ने जोधपुर राज्य की ख्यात के आधार पर डॉ के आर कानूनगो की भूलो म सुधार किया था और यह बताया था कि —

(i) शेरशाह को मालदव क सेनानायक के साथ डीडवाना मे सघर्ष करना पडा ।

(ii) शेरशाह ने परबतसर, अजमेर और मगलियावास के पास का रास्ता रोक रखा था इसलिये मालदेव के लिये यह सम्भव नही था कि वह जोधपुर पहुँच सके ।

(iii) शेरशाह और मालदेव के सैनिकों के बीच 1544 ई मे सुमेल नामक स्थान पर युद्ध हुआ था ।

2 मारवाड म राठौड राज्य के सस्थापक राव सीहा के आगमन की तिथी बाकीदास की ख्यात के आधार पर ही निर्धारित की जा सकी है । सीहा की मृत्यु की तिथी की जानकारी तो शिलालेख से मिल जाती है परन्तु बाकीदास की ख्यात से हम पता चलता है कि राव सीहा ने मारवाड मे 17 वर्ष तक शासन किया । इसके बाद ही उसकी मृत्यु हुई ।

3 इसी प्रकार नेणसी की ख्यात और आमेर की ख्यात से पता चलता है कि राणा प्रताप और मानसिंह के बीच 1573 ई मे उदयसागर पर भेंट हुई थी ।

ख्यातों की कमिया—

(i) ख्यातो मे घटनाओं का क्रमबद्ध रूप से वर्णन नहीं किया गया है ।

(ii) ख्यात के लेखकों ने तिथियों को अधिक महत्व नही दिया था । इनमे वर्णित अधिकाश तिथियाँ सही नही है ।

(iii) ख्यातो म व्यक्तियों और स्थानो के नाम सही नहीं है ।

(iv) नेणसी के अतिरिक्त अन्य किसी भी ख्यात लेखक ने अपनी ख्यात म उन स्रोतो का उल्लेख नही किया है जहां से उसने सामग्री प्राप्त की है। इसलिय शोधकर्त्ताओ को ख्यात साहित्य का उपयोग करते समय सावधानी रखनी चाहिये।

(v) ख्याता से जनसाधारण के बारे मे प्रकाश नही पडता है।

(vi) चूंकि अधिकाश ख्यातें राज्याश्रय मे लिखी गई थी इसलिये इनम राजाओ के बार म अतिशयोक्तिपूर्ण वर्णन मिलता है।

यद्यपि यह सत्य है कि ख्यातो म अनेक दोष विद्यमान है तथापि इनसे राजस्थान के इतिहास के बारे मे महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त होती है । ख्याता के लेखका को शुद्ध इतिहासकार नही माना जा सकता है फिर भी यदि व इस बिखरी हुई सामग्री को एकत्रित नही करत तो आधुनिक इतिहासकार इस सामग्री का प्रयोग करने मे वचित रह जाते । इसलिये ख्याता को राजस्थानी इतिहास का महत्वपूर्ण स्रोत माना जा सकता है।

राजस्थान मे ख्यात लेखन का काय वचनिका और अचलदास खींची के साथ प्रारम्भ हुआ। नेणसी की ख्यात सबसे पुरानी ख्यात मानी जाती है। 17वीं और 18वी शताब्दी म तो लगभग सभी राज्यो म ख्यातो की रचना प्रारम्भ हो गई थी। इन ख्यातो में मुण्डियार की ख्यात नेणसी की ख्यात बाकीदास की ख्यात दयालदास की ख्यात कविराजा की ख्यात एव जोधपुर राज्य की ख्यात आदि महत्वपूर्ण हैं।

(i) जोधपुर राज्य की ख्यात

इस ख्यात का लेखक मुरारीदान था। इसकी रचना जोधपुर क महाराजा मानसिंह के समय मे की गई थी। इसम राव सीहा स लेकर महाराजा मानसिंह की मृत्यु तक का जोधपुर राज्य का इतिहास है। ख्यात के लखक ने कल्पित बाता और किंवदतियो के आधार पर जोधपुर राज्य का जो प्रारम्भिक इतिहास लिखा है उसकी तिथिया गलत है। राव जोधा के बाद के इतिहास का पता इसी ख्यात स चला है। ओझा न इस ख्यात के महत्व के बारे म कहा था कि लेखक ने विशेष छानबीन नही करके जनश्रुति के आधार पर बहुत सी बातें लिख डाली हैं जो निराधार होने के कारण काल्पनिक ही ठहरती है। साथ ही राज्याश्रय म लिखी जाने क कारण इसम दिये हुये बहुत से वर्णन पक्षपातपूर्ण एव एकागी हैं।

इस ख्यात स कइ घटनाओ पर वास्तविक प्रकाश नही पडता है। परतु जोधपुर राज्य के इतिहास के लिये इस ख्यात का बहुत अधिक महत्व है क्योकि यह बहुत विस्तार से लिखी गई है। इसी ख्यात से यह पता चलता है कि मालदेव क चले जान के बाद भी उसके सनिको ने शेरशाह की सेना से सघर्ष किया था। अब्बास खा सरवानी के ग्रन्थ स इस सम्बन्ध म कोइ सूचना नही मिलती है। मालदेव की सेना और शेरशाह की सेना के बीच 4 जनवरी 1544 ई को सुमल नामक

स्थान पर युद्ध हुआ था। सुमेल युद्ध की तिथी जोधपुर राज्य की ख्यात के आधार पर डॉ वी एस भार्गव ने निर्धारित की है। इसी प्रकार इस ख्यात से कई नये तथ्य प्रकाश मे आये है। डॉ रघुवीरसिंह (सीतामऊ) को भारतीय इतिहास अनुसन्धान परिषद, नई दिल्ली के द्वारा इस ख्यात के सम्पादन हेतु आर्थिक अनुदान दिया गया है। उन्होंने इस ख्यात का सम्पादन कर दिया है जो अतिशीघ्र प्रकाशित होने वाली है।

(ii) दयालदास की ख्यात—

इस ख्यात का लेखक दयालदास सिंढायच था जिसने महाराजा रतनसिंह (1828-1851 ई) के आदेश से इसको लिखा था। इसमे बीका से लेकर सरदारसिंह के राज्याभिषेक तक की घटनाओं का इतिहास क्रमबद्ध रूप से प्राप्त होता है। दयालदास ने पट्टे, बहियो, खरीता, शाही फरमाना एव पुरानी वशावलियो को आधार बनाकर ही अपनी ख्यात लिखी है। उसकी ख्यात मे अंग्रेजी पत्रों के अनुवाद तथा फारसी भाषा के फरमानो के नागरी भाषा म अनुवाद मिलते हैं। दयालदास की ख्यात म कही कही तिथिया गलत मिलती है। इसका कारण यह था कि उसने स्मारको और सस्कृत मे लिपिबद्ध लेखो का उपयोग नही किया।

इस ग्रन्थ से जोधपुर राज्य के प्रारम्भिक इतिहास के बारे म जानकारी प्राप्त होती है। दयालदास ने अन्य ख्यात लेखको के समान अपने आश्रयदाता की बहुत अधिक प्रशसा की है इसलिए इस ग्रन्थ को अधिक विश्वसनीय नही माना जा सकता। दयालदास ने ख्यात का आधार बोलचाल की भाषा को बनाया है। इसलिए हम इससे उस समय की लोकभाषा के बारे मे जानकारी प्राप्त होती है।

(iii) बाकीदास की ख्यात

नेणसी की तरह ही बाकीदास ने अपनी ख्यात राजस्थानी मे गद्य मे अलग अलग बातो का सग्रह करके लिखी है। अन्तर सिर्फ इतना है कि नेणसी ने अपनी बातें तीन चार पृष्ठो म लिखी है जबकि बाकीदास ने अपनी बातें दो तीन पक्तिया म ही लिखी हैं।

बाँकीदास का जन्म 1781 ई मे भाडियावास नामक गाव मे हुआ था। ये मारवाड के चारण (आसिया शाखा) थे। इन्होंने प्रारम्भिक शिक्षा अपने घर पर ही प्राप्त की थी। उसके पश्चात उच्च शिक्षा की प्राप्ति के लिए जोधपुर गये जहा उन्हे रामपुर के ठाकुर अर्जुनसिंह ऊदावत ने सहयोग प्रदान किया।

1803 ई में बाकीदास नाथपथी गुरु देवनाथ के सम्पर्क मे आये। गुरु के प्रयासो से इनका सम्पर्क जोधपुर महाराजा मानसिंह से हुआ। महाराजा मानसिंह ने इनकी विद्वता से प्रभावित होकर इन्हे लाख पसाव पुरस्कार प्रदान किया। इसके पश्चात् उन्हे महाराजा ने भाषा गुरु के पद पर नियुक्त किया। अन्य राज्यो के शासक भी बाकीदास का सम्मान करते थे। इन्होंने अजाची व्रत ले रखा था

इसलिए दूसरे शासकों से ये पुरस्कार और उपहार स्वरूप धन नहीं लेते थे। 1833 ई में इन्होंने पद्माकर जो जयपुर का कवि था, को शास्त्रार्थ मे परास्त किया। 1833 ई म जब इनकी मृत्यु हुई तो महाराजा मानसिंह न इनक प्रति शोक व्यक्त करत हुय निम्नलिखित शब्द कहे थे —

> "सद् विद्या बहु साज, बाकी थी बाका बसू,
> कर सूधी कवराज, आज कठिगा आमिया।
> विद्या कुल विख्यात, राजकाज हर रहस री
> बाका, तो बिणवात किण आगल मन री कहा।

यद्यपि बाकीदास आशु कवि थे तथापि वे संस्कृत, व्रज, राजस्थानी एव फारसी आदि भाषाओं के अच्छे ज्ञाता थे। इतिहास क प्रति इनकी रुचि होने क कारण ये इतिहास से सम्बन्धित बातों का सग्रह करते रहते थे। इस कथन की पुष्टि उनके द्वारा लिखित ख्यात म होती है। ईरान क एक यात्री न इनक ऐतिहासिक ज्ञान की प्रशसा के बार म निम्न शब्द कह थ एसा विद्वान मेरी दृष्टि में दूसरा नही आया। ईरान मेरी जन्म भूमि है परन्तु ईरान के इतिहास का ज्ञान इनका (बाकीदास का) मुझसे भी अधिक है।"

बाकीदास न अपन जीवन म 36 रचनाए लिखी थी। उनमे से 26 रचनायें तीन भागो म प्रकाशित हो चुकी है और 10 अभी तक अप्रकाशित हैं। इनकी प्रकाशित और अप्रकाशित रचनायें निम्नलिखित है —

(1) सूर छतीसी (2) सिंघराव छतीसी (3) सुपह छतीसी (4) सुजस छतीसी (5) कुकवि छतीसी (6) सीहू छतीसी (7) हमरोट छतीसी (8) बिदुर छतीसी (9) कृष्ण पच्चीसी (10) वचन विवेक पच्चीसी (11) धवल पच्चीसी (12) सतोष बावनी (13) कायर बावनी (14) दातार बावनी (15) नीति मञ्जरी (16) जेहल जसजड़ाव (17) माहू मदन (18) चुगल मुख चपेटिका (19) वार विनोद (20) कृष्ण दर्पण (21) भूरजाल भूषण (22) वमक वाता (23) झमाल नखसिख (24) मावड़िया मिजाज (25) गगालहरी (26) बस वार्ता (27) कृष्ण चन्द्रिका (28) च द्र दूषण दर्पण (29) मान प्रशा (30) विरह चन्द्रिका (31) वैशाख वार्ता सग्रह (32) चमत्कार चन्द्रिका (33) प्रकीर्णक (34) रस और अलकार (35) वृत रत्नाकर (36) महाभारत का अनुवाद।

लेकिन बाकीदास की महत्वपूर्ण कृति ख्यात है जिससे उनका एक साहित्यकार एव इतिहासकार के रूप मे प्रसिद्धि प्राप्त हुई है। बाकीदास की बातें छोटे फुटकर दोहों म लिखी हुई हैं। उनकी अधिकाश बातें दो तीन या चार पक्तियो म ही हैं। दो-तीन पृष्ठो में तो उन्होंने काई विरली ही बात लिखी है। उनकी ख्यात मे 2776 बातें सग्रहित है।

बाकीदास ने अपनी ख्यात मे बातें क्रमबद्ध रूप स नही लिखी है। एक ही व्यक्ति के सम्बन्ध मे अनेक बातें भिन्न भिन्न स्थानो पर लिखी थी, इसलिए

कई वातो की पुनरावृत्ति भी हुई है। ओझा ने इस ख्यात की क्रमबद्धता के बारे मे निम्न शब्द कहे थे—"उसमे कोई क्रम नही है। एक बात मालवे की है तो दूसरी गुजरात की है और तीसरी कच्छ की। इस प्रकार एक महासागर सा ग्रथ है। उसको क्रमबद्ध करना बडे परिश्रम का काम है और अनेक पुस्तकें पास रखने से क्रमबद्ध हो सकता है। एक राज के ताल्लुक की वातें सौ पचास जगह आ जाती है।"

जब तक यह ख्यात प्रकाशित नही हुई थी तो क्रमबद्धता के अभाव के कारण इससे ऐतिहासिक जानकारी प्राप्त करना बहुत कठिन काय था। परन्तु यह ख्यात राज्य प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान जोधपुर के द्वारा 1958 ई मे ही प्रकाशित कर दी गई है। अब अनेक शोध ग्रन्थो मे इसे एक महत्वपूर्ण ऐतिहासिक स्रोत के रूप म उपयोग म लिया जा रहा है।

बाकीदास की ख्यात मे अनेक अज्ञात घटनाओ के बारे में जानकारी प्राप्त होती है। ख्यात की 11वी बात से पता चलता है कि मारवाड के राव सीहा (राठौड राज्य का सस्थापक) ने 17 वष तक शासन किया था। बीठू से प्राप्त छतरी के लेख से मालूम होता है कि राव सीहा की मृत्यु 9 अक्टूबर 1273 ई को हुई थी। इसका मतलब यह हुआ कि सीहा 1256 ई म मारवाड आया था जबकि डा गोपीनाथ शर्मा के अनुमार सीहा 1240 ई म मारवाड आया था। 138वी बात म उन शहीदो के नामो का वणन है जो 1553 ई मे मालदेव की ओर से युद्ध करते हुए मेडता मे युद्ध म मारे गए थे। 159वी बात मे मालदेव के उन शहीदो के नाम दिये हुये है जो 1559 ई के मेडता के युद्ध मे वीरगति को प्राप्त हुय थे। मालदेव ने अपनी पुत्रियो का विवाह गुजरात के सुलतान हाजी खा पठान नागौर के पठान सुलतान शेरशाह सूर और बादशाह अकबर से किया था। यह जानकारी हम ख्यात की 189, 190, 191, 192 एव 194 से प्राप्त होती है। इस प्रकार यह ख्यात कई अलभ्य तथ्यों पर प्रकाश डालती है। डॉ जी एन शर्मा ने इस ख्यात के बारे मे लिखा है "लेखक पर घटनाओ के समकालीन होने के कारण अधिक विश्वास किया जा सकता है। बाकीदास की बातों म इतनी सत्यता और मार्गभित भावनाए हैं कि उनका सभी इतिहासकारो को सम्मान करना चाहिय।"[1]

बाकीदास स्वतन्त्र प्रकृति के स्पष्टवक्ता थे। इसकी पुष्टि इस बात से होती है कि जब राजस्थानी शासको ने अग्रेजो से सन्धि कर उनकी अधीनता स्वीकार कर ली तब बाकीदास ने एक गीत की रचना कर तत्कालीन शासको की कटु आलोचना की। उस गीत की पक्तिया निम्नलिखित है —

1 शर्मा जी एन ए बिबलियोग्राफी ऑफ मेडीवल राजस्थान पृ 80

"आया अगरेज मुलक रे ऊपर, आहस लीधा खाधरा।
धणिया मरे न दीधी धरती धणिया उभा गई धरा॥
फौजा देख न कीधी फौजा दोयण किया नखला डला।
खवा चाव चूडै नाहरै उणहि र चूडै गयो चला॥
छत्रपतिया लागी न है छाणत गढपतिया घर पर घुसी।
बाल न है किणो बारडा वोरा जोरा जोरा गई जमी॥
दुय चत्र मास वादिया दिखणो भोम गई सो लिखत भवेस।
पूगो नही चाकरी पकडी, दीधौ नही मडेढौ देस॥
बजियो भलो भरतपुर वालो गाजे गजर धजर नभ गोम।
पैला सिर साहिब रो पडिया, भड उभै नह दीधी भाम॥
माही जाता, चीचाता महला, ये दुय मरण तणा अवसाण।
राखो रे कीहिक रजपूती मरद हिदू की मुसलमान॥
पुर जोधाण, उदैपुर जपुर पहूँथारा खूटा परियाण।
आके गयी आवसे आक वाकै आसल किया वखान॥

वाकीदास ने अपनी ख्यात मे न केवल धार्मिक और फुटकर बातें ही लिखी है अपितु भौगोलिक बाता का वर्णन भी किया है। इसके अतिरिक्त इस रचना म राजपूतो की वार्ता के अन्तगत राठौडो की बाता पडिहारा की बाता, कछवाहा की बाता यादवा की बाता गहलोता की बाता मराठा सिक्खो मुसलमानो और अग्रेजो की बातें भी लिपिबद्ध की हुई है। स्पष्ट है कि राजस्थान क क्रमिक इतिहास को तयार करने म यह ग्रन्थ काफी उपयोगी सिद्ध हो सकता है।

मुरारीदान श्यामलदास और सूयमल्ल मिश्रण आदि चारण इतिहासकारो स पहले बाकीदास का नाम लिया जाता है। ऐसा प्रतीत होता है कि बाकीदास की ख्यात स प्रभावित होकर सूयमल्ल मिश्रण ने अपने ग्रन्थ वश भास्कर की रचना की होगी। बाकीदास ने अपनी बातें पद्य के स्थान पर गद्य मे लिखी जिससे इतिहास लेखन की एक नई परम्परा प्रारम्भ हुई। इनके कारण ही जोधपुर राजवश का इतिहास अखिल भारतीय स्तर पर प्रसिद्धि प्राप्त कर सका था। बाकीदास की ख्यात से महत्वपूर्ण सूचनायें प्राप्त होती है एव इसम दी हुई अधिकाश बातें विश्वसनीय है इसलिए इसको राजस्थान के इतिहास क प्रमुख स्रोत क रूप म स्थान प्राप्त है।

डॉ गोपीनाथ शर्मा ने बाकीदास की ख्यात के ऐतिहासिक महत्व को निम्न शब्दा म व्यक्त किया है— इनकी बातो म अनेक प्रकार के भौगोलिक विषयो रहन-सहन रीति रिवाज व्यवसाय-वाणिज्य आदि पर भी प्रकाश पडता है। साथ ही साथ यदि हम 19वी सदी की राजस्थानी का ठीक प्रयोग समझना चाह तो यह बाकीदास री बाता स उपलब्ध होता है।

बाकीदास ने इस ख्यात को पतले कागज पर मारवाडी भाषा म लिखा था। इस मूल कृति का देवनागरी म अनुवाद मु शी देवीप्रसाद ने किया। इसके पश्चात्

इन्होंने यह मूल कृति ओझाजी को दे दी थी। अब यह मूल कृति प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर के संग्रहालय में होनी चाहिए।

(iv) मुण्डियार की ख्यात

मुण्डियार नामक गाव नागौर से 10 मील की दूरी पर दक्षिण में स्थित है। इस गाव को जागीर में चारणों को प्रदान किया गया था। मुण्डियार की ख्यात में राठौड राज्य के संस्थापक राव सीहा से लेकर महाराजा जसवन्तसिंह प्रथम की मृत्यु तक का इतिहास प्राप्त होता है। इससे ऐसा प्रतीत होता है कि इस ख्यात की रचना महाराजा जसवन्तसिंह के समय में की गई होगी। इसमें प्रत्येक राजा के जन्म, राज्याभिषेक एव मृत्यु की तिथियों का वर्णन किया गया है। इससे यह भी पता चलता है कि किस किस राजा के कितनी कितनी रानियां थी और उनसे कौन कौनसी सन्तानें पैदा हुई थी। मुगल शासकों के मारवाड कन्याओं से विवाह के बारे में इसमें विवरण दिया हुआ है। इस ख्यात से पता चलता है कि सलीम (अकबर का पुत्र) ने जोधपुर के मोटा राजा उदयसिंह की दत्तक बहिन जोधाबाई से विवाह किया था, जो मालदेव की दासी की पुत्री थी। इस प्रकार इस ख्यात से महत्वपूर्ण ऐतिहासिक जानकारी प्राप्त होती है। इस ख्यात की प्रति डॉ० रघुवीरसिंह (नटनागर संस्थान, सीतामऊ) द्वारा खरीद ली गई है।

(v) कविराजा की ख्यात

इस ख्यात से मारवाड के राठौड शासकों के इतिहास के बारे में जानकारी प्राप्त होती है। इस से महाराजा जसवन्तसिंह प्रथम के शासनकाल की घटनाओं के बारे में पता चलता है। इतना ही नहीं, इसमें राव जोधा रायमल गोविन्ददास भाटी (सूरसिंह के मन्त्री) के उपाख्यानों का भी वर्णन उपलब्ध है।

(vi) नैणसी की ख्यात

नैणसी की ख्यात सबसे प्राचीन ख्यात मानी जाती है। इस ख्यात का लेखक जोधपुर महाराजा जसवन्तसिंह प्रथम (1638–78 ई०) की सेवा में कार्यरत था। उसने भी अबुल फजल के समान निम्न दो ग्रन्थों की रचना की। —(1) ख्यात एव (2) गावा री ख्यात।

नैणसी का प्रथम ग्रन्थ, जिसको प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान जोधपुर के द्वारा चार जिल्दों में प्रकाशित कर दिया गया है। और दूसरी रचना गावा री ख्यात भी दो जिल्दों में प्रकाशित कर दी है। श्री रामनारायण दुग्गड ने इसका हिन्दी अनुवाद किया था जो काशी नागरी प्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित किया जा चुका है।

नैणसी का जीवन परिचय—

नैणसी का जन्म 1611 ई० में जोधपुर में मोहणात शाखा के ओसवाल परिवार में हुआ था। इनके पिता का नाम जयमल था जो जोधपुर महाराजा के दरबार में दीवान के पद पर नियुक्त थे। नैणसी ने गजसिंह के समय राजकीय सेवा

मे प्रवेश किया था परन्तु इनके कार्यों से प्रभावित होकर महाराजा जसवन्तसिंह प्रथम ने इनको 1658 ई० म दीवान के पद पर नियुक्त कर दिया।

1658 से लेकर 1666 ई० तक जसवन्तसिंह के दीवान के पद पर काम करते हुए कई युद्धो म भाग लिया और प्रशासनिक कार्यों को भी अच्छी तरह से सम्पन्न किया था। परन्तु 1666 ई० म जसवन्तसिंह नैणसी से नाराज हो गया था। इसका कारण यह था कि उनकी अनुपस्थिति म नैणसी ने अपने सगे-सम्बन्धियों को और मित्रो को राज्य म उच्च पदो पर नियुक्त कर दिया था। इसलिये जसवन्तसिंह ने 1666 ई० मे नैणसी और इसके भाई सुन्दरदास को बन्दी बना लिया। बन्दी अवस्था म ही नैणसी और उसके भाई ने 1671 ई० में आत्महत्या कर ली। इस प्रकार इस सुप्रसिद्ध ख्यात लेखक का अन्तिम समय बहुत कष्टपूर्ण व्यतीत हुआ।

ग्रन्थ की प्रमुख विशेषताएँ—

नैणसी ने अपनी ख्यात म राजस्थान के राठौडो, कछवाहा, भाटियो हाडौती, शेखावाटी, सिरोही, किशनगढ और बागड के भनपूव रजवाडों के जागीरदारो पर प्रकाश डाला ह। इसके अतिरिक्त गुजरात काठियावाड, कच्छ, बुन्देलखण्ड, बघेलखण्ड, मालवा, दिल्ली और आगरा और दक्षिण के साथ हुए युद्धो के बारे मे जानकारी प्राप्त होती है।

नैणसी की ख्यात से राजपूत जातियो की विभिन्न शाखाओ के अतिरिक्त पहाडो, नदियो और शहरो के बारे मे भी जानकारी प्राप्त होती है। ख्यात म चौहानो, भाटिया और राठौडो का इतिहास विस्तारपूवक लिखा हुआ है। इस ग्रन्थ से हम अनेक युद्धो, योद्धाओ एव तिथियो के बारे में भी जानकारी प्राप्त होती है। ख्यात के अन्तिम भाग मे राजस्थान के गावो एव परगनो की उत्पत्ति तथा उनके ऐतिहासिक महत्व के बारे म वणन किया गया है जो गावा री ख्यात के नाम से प्रसिद्ध है।

ओझा ने इसके महत्व के बारे मे लिखा है "नैणसी का इतिहास देखने से विदित होता है कि वह जगह जगह के चारणो, भाटो आदि से भिन्न भिन्न राज्यो या वशो का इतिहास मगवाकर सग्रह करता था। कही भी जाता तो वहा के कानूनगो से पुराना हाल मालूम कर लिख लेता था। इसी तरह वह अपने रिश्तेदारो से भी सग्रह कराया करता था। इसी कारण नैणसी का ग्रन्थ भाटो की ख्यातो की अपेक्षा बडे ही महत्व का है। नैणसी ने भी भाटो की पुस्तको म से अनेक वशावलिया की नकल की है, परन्तु वह एक वश की एक ही वशावली से सन्तुष्ट न होकर जितनी तरह की वशावलिया या वृतान्त मिलते थे, उन सबका सग्रह करता था। विक्रम सम्वत् 1300 के पीछे से राजस्थान के इतिहास को जानने मे यह बहुत महत्वपूर्ण ग्रन्थ ह। इसमे उदयपुर डूगरपुर, बासवाडा, प्रतापगढ़ के गुहिलोत या सिसोदिया, हाडा, देवडा, कापलिया आदि चौहानो के

साथ साथ जैसलमेर के भाटियो, जोधपुर, बीकानेर और किशनगढ के राठौडा तथा बुदेलो, बघेलो आदि क इतिहास के बारे म पता चलता है।

ओझा ने तो यह भी लिखा है कि अगर कनल टाड को यह ग्रथ उपलब्ध हो जाता तो उसके ग्रथ म जो अनेक अशुद्धिया आ गई वे नही रह पाती।"[1]

आज भी नेणसी के ग्रन्थ को देखे बिना राजस्थान का इतिहास सतोषप्रद नहीं लिखा जा सकता। नेणसी दीवान के पद पर नियुक्त था इसलिए उसे सामग्री एकत्रित करने में कोई कठिनाई नहीं हुई एव उसने उस सामग्री का आलोचनात्मक ढग से प्रयोग किया। यही कारण है कि डा० के० आर० कानूनगो ने नेणसी की प्रत्यक बात को ऐतिहासिक घटना के रूप मे स्वीकार किया है।

ग्रथ की विश्वसनीयता

यद्यपि नेणसी दीवान के पद पर नियुक्त था तथापि उसके ग्रथ को राजकीय सरक्षण मे लिखा हुआ नहीं माना जा सकता क्योकि उसने अपने ग्रथ मे कई स्थाना पर अपने स्वामी की असफलताओ का और कमजोरियो का उल्लेख किया है। नेणसी के दूसरे ग्रथ "गावा री स्यात" को राजस्थान का गजेटियर कहा जा सकता है जिसमे जोधपुर राज्य के परगनो के बारे मे विस्तृत वणन उपलब्ध है। ऐसा प्रतीत होता है कि वह जोधपुर राज्य के विभिन्न परगनो का इतिहास एव सामतो के काय का विस्तृत वणन करना चाहता था। परतु यह सारा काय अधूरा ही रह गया। नणसी के दोनो ही ग्रथ मारवाडी भाषा मे लिखे हुए उपलब्ध है।[2]

डा० के० आर० कानूनगो ने इसके बारे म लिखा है कि 'आधुनिक इतिहासकारो को नेणसी की स्यात, बहुत सम्भव है अधिक रुचिकर नही लगे क्योकि उसकी लेखन प्रणाली मे वह परिपक्वता एव शुद्धता नजर नही आती, जिसको ढूढने का प्रयास आधुनिक इतिहासकार करता है परतु जिस युग मे यह लिखी गई, वह युग पराक्रम एव शौय का युग था। इसीलिये उसमे वास्तविकता एव स्पष्टता पर अधिक ध्यान दिया गया, भाषा की शुद्धता का उतना ख्याल नही रखा गया। इस इतिहास का महत्व केवल राजनीतिक ही नही, अपितु राजस्थान का सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक इतिहास जानने हेतु यह ग्रथ महत्वपूण है। उस समय के उत्सव, त्यौहार आदि का सुदर वणन नेणसी ने इस स्यात मे किया है।"[3]

ग्रथ का महत्व

ख्यात से हम उस समय के पदाधिकारिया के नामो, पदो, एव दरबार के रीति-रिवाजो के बारे म जानकारी प्राप्त होती है। यह ख्यात पुराने गीतो और

(1) ओझा गौरीशकर हीराचद—राजस्थान का इतिहास, पृष्ठ 24–25
(2) शर्मा, जी एन —राजस्थान का इतिहास, पृष्ठ 144
(3) कानूनगो के आर (डॉ)—स्टडीज इन राजपूत हिस्ट्री पृष्ठ 94

दोहो मे लिखी हुई है, जिसका ग्रथ समझना कठिन था परन्तु दानों ग्रंथों सम्पादन के पश्चात् इस समस्या का समाधान हो गया है। इससे जोधपुर के महाराजा जसवन्तसिंह प्रथम की उपलब्धियों के बारे म महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त होती है
क्या नेणसी राजस्थान का ग्रबुल फजल था ?

डा० ग्रोझा एव मुन्शी देवीप्रसाद ने भी नेणसी की ख्यात को राजस्थान इतिहास की जानकारी देने वाला महत्वपूर्ण ऐतिहासिक स्रोत माना है। मुन्शी देवीप्रसाद ने तो यहा तक कहा है कि नेणसी राजस्थान का ग्रबुल फजल था। इस कथन की पुष्टि डा के० ग्रार० काननगो ने भी की। ग्रब हम नीचे नेणसी ग्रौर ग्रबुल फजल की तुलना कर यह बतायेंगे कि वास्तव में नेणसी को राजस्थान का ग्रबुल फजल कहा जा सकता है या नहीं।

नेणसी ग्रौर ग्रबुल फजल मे समानताए

(i) दोनो ही राजकीय इतिहासकार थे ग्रौर दोनो ने ही दो-दो ग्रथो की रचना की।

(ii) ग्रबुल फजल की तरह नेणसी का भी प्रशासन एव सेना से सम्बद्ध रहा। महाराजा जसवन्तसिंह की ग्रनुपस्थिति मे उसने कई युद्धों में भाग लिया एव मारवाड म शान्ति तथा व्यवस्था बनाये रखी।

(iii) दानो ही प्रशासनिक गतिविधियो में समान रूप से भाग लेते रहे तथा दोनो ने एक कुशल प्रशासक का परिचय दिया।

(iv) दोनो का ग्रन्त एक जैसा हुग्रा।

ग्रसमानताए

नेणसी ग्रौर ग्रबुल फजल की परिस्थितियाँ एक जैसी नही थी। ग्रबुल फजल ग्रकबर का दरबारी कवि था, जिसे मुगल सम्राट का ग्राश्रय एव सरक्षण प्राप्त था। इसलिए उसने ग्रपनी कृतियो मे ग्रकबर की ग्रावश्यकता से ग्रधिक प्रशसा की है जबकि दूसरी ग्रोर नेणसी ने बिना किसी पक्षपात के राजवशो का इतिहास लिखा है। उसने ग्रपनी रचनाग्रो मे ग्रपने ग्राश्रयदाता जसवन्तसिंह की पराजेयो का भी स्पष्ट रूप से उल्लेख किया है। ऐसी सत्य बात लिखने का साहस हम ग्रबुल फजल म नही दिखाई देता। ग्रत वह नेणसी का मुकाबला नही कर सकता।

डा० गोपीनाथ शर्मा ने लिखा है कि "सबसे बडी बात हम नेणसी क सम्बध मे यह पाते हैं कि उन्होंने जो वर्णन जिस पुस्तक से लिया या जिस व्यक्ति से जो बात सुनी उसका उल्लेख स्पष्टता स कर दिया। इस ग्रथ म ग्रबुल फजल से भी नेणसी की ग्रपनी जानकारी के साधनो के प्रति ग्राभार प्रदर्शन की भावना उत्कृष्ट रही है, जो सवथा सत्य है।" [1]

---

(1) शर्मा जी एन —राजस्थान का इतिहास पृष्ठ 144

अबुल फजल ने भारत की सामाजिक परम्पराओं तथा जन जीवन का वर्णन नहीं किया है, जबकि नैणसी ने राजनीतिक इतिहास के साथ साथ अपने राज्य के सामाजिक रीति रिवाज, उत्सव त्यौहार, विवाह-सम्बन्ध, रहन सहन, आर्थिक एवं धार्मिक स्थिति का भी विस्तृत रूप से वर्णन किया है।

इस सम्बन्ध मे डा० कानूनगो ने लिखा है कि, "नैणसी ने उन साधनों का वर्णन किया है, जिसका उसने प्रयोग किया था। जिनमे से बहुत कुछ अब नष्ट हो चुके है। जबकि अबुल फजल ने अकबरनामा एव आइने अकबरी म उन साधनो का उल्लेख नही किया, जहा से उसे सामग्री प्राप्त हुई। इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि नैणसी की रचनाओ का महत्व अबुल फजल की रचनाओ से कही अधिक बढ जाता है।'

डा के० आर० कानूनगो ने तो यहा तक लिखा है कि "पुस्तकालय व राज्याश्रय अबुल फजल उत्पन्न कर सकते है परन्तु नैणसी को जन्म नहीं दे सकते। इस ख्यात मे राजपूतो के शौर्य का स्पष्ट और विस्तृत वर्णन मिलता है, साथ ही राजस्थान की भौगोलिक स्थितियो का तथा वहा की सामाजिक एव आर्थिक स्थिति का विशद वर्णन इस ख्यात म मिलता है।"

स्पष्ट है कि नैणसी की ख्यात को ऐतिहासिक स्रोत के रूप मे महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। दुर्भाग्यवश कर्नल टाड अपनी रचनाओ म इस ख्यात का उपयोग नहा कर पाये। परन्तु डा० ओझा एव पण्डित विश्वेश्वर नाथ रेऊ ने इस ख्यात का उपयोग अपनी रचनाओ मे किया है। आधुनिक समय के शोध प्रबन्धो म नैणसी की ख्यात का प्रयोग एक मूलभूत स्रोत के रूप मे किया जा रहा है। यही कारण है कि नैणसी की रचनाओ को दूसरो की रचनाओ की अपेक्षा ऊंचा स्थान प्राप्त है।

डा० नारायणसिंह भाटी ने लिखा है, नैणसी का प्रयास आंचलिक महत्व का होते हुए भी अपनी कुछ विशेषताओ को रखता है, जिनका अबुल फजल मे अभाव है।'[1] डा० कानूनगो ने इस सम्बन्ध मे लिखा है कि, "राजपूत वीरता के शुद्ध वातावरण म सास लेते हुए राजपूताने के सामाजिक व आर्थिक जीवन के साथ वंशावली का एक चित्र हमारे सम्मुख स्पष्ट रूप से आता है। नैणसी पूर्ण इतिहासकार है। उसकी तुलना अबुल फजल स व्यर्थ है।"

ग्रन्थ के दोष

(1) नैणसी ने 1452 ई० के पूर्व की वंशावलियो एव भाटो की पोथियो को आधार बनाकर ग्रन्थ लिखा था, इसलिए उसमें नाम अशुद्ध मिलते है।

---

(1) भाटी नारायणसिंह—नैणसी की ख्यात प्रथम भाग पृष्ठ 12

(2) कानूनगो के आर (डा)—स्टडीज इन राजपूत हिस्ट्री, पृष्ठ 194

(ii) नैणसी ने अपनी ख्यात मे जिन साधनो से जो जानकारी प्राप्त हुई उसे उसी प्रकार लिख दिया। अत ख्यात मे असंगतियां एव अमोत्पादक वर्णन भी मिलता है।

(iii) ख्यात मे दी हुई अधिकाश तिथियां सही नही है।

(iv) उसने ख्यात मे घटनाओ का वर्णन क्रमबद्ध रूप से नहीं किया है।

(v) नैणसी ने एक घटना का सम्पूर्ण वर्णन एक स्थान पर नही करके अलग अलग स्थानो पर किया है। इससे यह पता चलता है कि उसको जसे जसे बातें याद आती गई, वह उन्हे लिखता गया।

मूल्याकन—इन दोषो के उपरा त भी यह स्वीकार करना पड़ेगा कि उसकी रचनाओ को एतिहासिक स्रोत के रूप मे स्वीकार किया जाता है। क्योकि इतना अधिक विस्तृत वर्णन अन्यत्र नही मिलता, इसलिये नैणसी के ग्रन्थ को आधार बनाये बिना राजस्थान का इतिहास स तोषप्रद ढग से नही लिखा जा सकता। उसने अपने ग्रन्थ मे पक्षपातपूर्ण वर्णन नही किया है। डा० के० आर कानूनगो ने लिखा है कि, पुस्तकालयो की सहायता एव राज्याश्रय द्वारा एक अबुल फजल पैदा किया जा सकता है किन्तु नैणसी नही।"

[डा० के० आर० कानूनगो स्टडीज इन राजपूत हिस्ट्री]

इस प्रकार स्पष्ट है कि राजस्थान के इतिहास की दृष्टि से नैणसी का स्थान अद्वितीय है।

नैणसी लेखक के रूप मे

नैणसी ने अपनी प्रथम रचना "ख्यात" को दोहों के रूप म मारवाडी भाषा मे लिखा था। इसमे उसने कई लडाइया, वीर पुरुषों एव उनकी जागीरो का राजस्थान के गाव व गढियो का तथा चौहानो, भाटियो और राठौडो के इतिहास का विस्तारपूवक वणन किया है। इस ख्यात में हमें जोधपुर डूगरपुर, बासवाडा, प्रतापगढ, जैसलमेर, गुजरात, बु देलखण्ड, हाडोती, आमेर आदि राज्यो के इतिहास के बारे म जानकारी प्राप्त होती है।

नणसी का दूसरा ग्रन्थ "गावा री ख्यात" के नाम से प्रसिद्ध है जिससे राजस्थान के विभिन्न गावो तथा परगनों की उत्पत्ति एवं उनके ऐतिहासिक महत्व के बारे मे जानकारी प्राप्त होती है। इस प्रकार एक लेखक के रूप में नैणसी का राजस्थान के इतिहास मे महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है।

प्रशासक के रूप मे नैणसी के काय

नैणसी ने 1658 से 1670 ई० के बीच 12 वष तक जोधपुर के दीवान के रूप मे काय किया। उस समय महाराजा जसव तसिंह प्रथम मुगल सेना के साथ जोधपुर से बाहर थे। तब नैणसी ने जोधपुर म शान्ति एव व्यवस्था बनाये रखी

एवं प्रशासन व्यवस्था को पुनर्गठित किया था। जब जोधपुर के पड़ौसी राज्य जैसलमेर से युद्ध हुआ तब नेणसी ने अपनी वीरता का परिचय दिया था। उसने जोधपुर म भूमि व्यवस्था को भी पुनर्गठित किया था। अबुल फजल मे इन गुणो का अभाव था। अत स्पष्ट है कि प्रशासक के रूप मे नेणसी अबुल फजल से अधिक दक्ष था।

नेणसी सेनापति के रूप में

नेणसी और अबुल फजल दोनो ने ही सेनानायक के रूप मे युद्ध मे भाग लिया था। अबुल फजल ने अहमद नगर के अभियान मे मुगल सेनापति के रूप मे भाग लिया था, जबकि नेणसी भी जोधपुर के महाराजा जसवन्तसिंह की अनुपस्थिति मे कई युद्धो म सेनापति के रूप मे अपने शौय का प्रदर्शन कर चुका था। नेणसी ने सनिक सेनापति एव लेखक के रूप मे अपने अद्भुत गुणो का परिचय दिया था, इसलिये नेणसी और अबुल फजल की तुलना करना उचित नही होगा। यद्यपि दोनो समकालीन नही थे परन्तु फिर भी दोना की सवाए अविस्मरणीय थी। नेणसी का एतिहासिक दृष्टिकोण अबुल फजल के समान वैज्ञानिक एव प्रभावशाली था।

इस आधार पर यदि नेणसी को राजस्थान का अबुल फजल और उसकी रचना "ख्यात" को अकबरनामा के नाम से पुकारा जाय तो कोई अतिशयोक्ति नही होगी।

राजस्थान क बिखरे हुए साहित्य को जैन मुनि जिनविजय के प्रयास से सग्रहित कर दिया गया है। अब यह साहित्य प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर के सग्राहलय म है। इसी सस्थान द्वारा नेणसी की ख्यात, बाकीदास री ख्यात, और दयालदास की ख्यात प्रकाशित की गई है। यद्यपि ख्यातो स महत्वपूण ऐतिहासिक जानकारी प्राप्त होती है, परन्तु इनका उपयोग पूरक साधन के रूप म ही करना चाहिए।

2 हिन्दी एव राजस्थानी भाषा मे लिपिबद्ध महत्वपूण कृतिया

(i) दलपतसिंह कृत दलपतविलास

बीकानेर के महाराजकुमार दलपतसिंह ने दलपतविलास नामक ग्रन्थ लिखा। एसा प्रतीत होता है कि यह ग्रन्थ 1588 से 1611 ई० के बीच लिखा गया होगा। इसम केवल 46 पृष्ठ है और ग्रन्थ अधूरा है। लेकिन फिर भी इससे कई महत्वपूण ऐतिहासिक तथ्यो के बारे मे जानकारी प्राप्त होती है। इससे पता चलता है कि अकबर ने हेमू का वध नही किया था। इस ग्रन्थ को सादूल राजस्थानी रिसच इन्स्टीट्युट बीकानेर ने प्रकाशित कर दिया है।

(ii) खिडिया जग्गा री वचनिका

वचनिका राजकमल प्रकाशन दिल्ली के द्वारा प्रकाशित की जा चुकी है। इसकी रचना खिडिया जग्गा के द्वारा की गई थी, जो रतलाम के रतनसिंह का दरबारी कवि था। यह ग्रन्थ साहित्यिक एव ऐतिहासिक दृष्टिकोण से काफी महत्व

रखता है। लेखक ने इस रचना को अपनी व्यक्तिगत जानकारी के आधार पर लिखा है। इससे धमत युद्ध के बारे में सही एवं विस्तृत जानकारी मिलती है।

(iii) कवि मान कृत राजविलास

कवि मान ने राजविलास नामक ग्रन्थ की रचना की, जो मेवाड़ के महाराणा राजसिंह का दरबारी कवि था। इसमें राजसिंह के शासनकाल के बारे में जानकारी प्राप्त होती है। चूंकि कवि मान महाराणा जगतसिंह का भी समकालीन था, इसलिये उसकी रचना से जगतसिंह के समय की प्रशासनिक व्यवस्था के बारे में भी जानकारी प्राप्त होती है।

(iv) कवि पद्मनाभ कृत कान्हड़दे प्रबन्ध

कवि पद्मनाभ ने कान्हड़दे प्रबन्ध नामक ग्रन्थ की रचना की, जो जालौर के शासक अखैराज का दरबारी कवि था। इसकी रचना 1455 ई० में चार बड़े भागों में की गई थी। यह दोहों और चौपाइयों में लिखा हुआ है। इससे पता चलता है कि जब अलाउद्दीन खिलजी ने जालौर पर आक्रमण किया तो वहां का शासक कान्हड़दे एवं उसका पुत्र वीरम दे युद्ध करते हुए वीरगति को प्राप्त हुए थे। इसमें गुजराती भाषा के उद्भव एवं विकास तथा राजस्थानी भाषा के विकास के बारे में जानकारी प्राप्त होती है। इसमें तत्कालीन सामाजिक परम्परा, राजपूतों की सैनिक व्यवस्था एवं जौहर का अच्छा वर्णन किया गया है। इससे समकालीन भूगोल पर भी अच्छा प्रकाश पड़ता है। इससे उस काल के साहित्यिक स्तर के बारे में पता चलता है।

इसमें कुछ ऐसी घटनाएं भी वर्णित है, जो ऐतिहासिक दृष्टि से सत्य नहीं है—जैसे वीरम दे का अलाउद्दीन की लड़की फिरोजा से प्रेम हो जाना एवं जालौर के साथ अलाउद्दीन का 8 वर्ष तक संघर्षरत रहना। फिर भी जालौर के साथ अलाउद्दीन के सम्बन्धों को समझने के लिये यह ग्रन्थ काफी उपयोगी है। इसका सम्पादन प्रो० के० बी० व्यास ने किया था जो राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान जोधपुर के द्वारा चार खण्डों में प्रकाशित किया जा चुका है।

(v) मलिक मोहम्मद जायसी कृत पद्मावत

मोहम्मद जायसी ने 1543 ई० में पद्मावत नामक महाकाव्य की रचना की थी। इससे पता चलता है कि अलाउद्दीन खिलजी के चित्तौड़ पर आक्रमण करने का मुख्य उद्देश्य मेवाड़ के राणा रतनसिंह की सुन्दर पत्नी पद्मनी को प्राप्त करना था। इस बात पर विद्वानों के बीच घोर मतभेद है कि पद्मनी की कहानी ऐतिहासिक थी या नहीं।

(vi) शिवदास कृत अचलदास खींची री बात

शिवदास ने 1433 ई० में अचलदास खींची री बात की रचना की थी। इससे गागरोन के खींची शासकों के बारे में महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त होती है। इसे सादूल रिसर्च इंस्टीट्यूट, बीकानेर ने प्रकाशित कर दिया है।

(vii) बीठू सूजे कृत राव जैतसी रो छन्द

बीठू सूजे ने 1572 ई० म राव जतसी रो छन्द नामक ग्रन्थ की रचना की थी। इससे पता चलता है कि जब कामरा ने भटनेर के किले पर आक्रमण किया तब कौन - कौन से बीकानेर के प्रसिद्ध योद्धा किले को मुगलो के हाथो से बचाने म वीरगति को प्राप्त हुए थे। इसस बीकानेर के शासक राव जैतसी की युद्ध प्रणाली क बारे म जानकारी प्राप्त होती है और स्थानीय रीति रिवाजो का भी बोध होता है। यह ग्रन्थ विदशी आक्रमणकारियो के प्रति राजपूतो की मनोवृत्ति पर अच्छा प्रकाश डालता है। इसके अतिरिक्त इस ग्रन्थ से राव चून्डा से राव लूण करण तक की उपलब्धियो के बारे म पता चलता है।

राव जैतसी और कामरा के बीच जो युद्ध हुआ था उसका वणन फारसी ग्रन्थ मे नही होने से राव जैतसी रो छन्द नामक ग्रन्थ का महत्व अधिक बढ जाता है। इस ग्रन्थ म दिये गये वणन की पुष्टि मे बीकानेर के चिन्तामणि नामक ग्रन्थ तथा श्री चौबीस टाजी के जैन मन्दिर के शिलालेख दयालदास की ख्यात एव जतसी रासो आदि से भी होती है। यह ग्रन्थ राजस्थान के अतिरिक्त समस्त भारत-वष का एक नवीन चित्र हमारे सामने प्रस्तुत करता है। हो सकता है कि लेखक ने घटनाओ का वणन अतिशयोक्तिपूण किया हो, परन्तु इस कथा का मूल भाग विश्व सनीय है, इसमे कोई सन्देह नही है।

(viii) करणीदान कृत सूरज प्रकाश

करणीदान न सूरज प्रकाश नामक ग्रन्थ की रचना की थी, जो जोधपुर के महाराजा अभयसिंह का दरबारी कवि था। इस ग्रन्थ से महाराजा जसवन्तसिंह, अजीतसिंह, और अभयसिंह के शासनकाल की घटनाओ के बारे मे जानकारी प्राप्त होती है। लेखक ने इसकी रचना अभयसिंह के समय मे की थी, इसलिये इसमे उसने अभयसिंह के शासनकाल मे हुए युद्धो का वणन अपनी व्यक्तिगत जानकारी के आधार पर लिखा ह। इससे उस समय के सामाजिक रीति रिवाजो, (वेशभूषा, खान पान, विवाह दान पुण्य उत्सव एव आखेट) के बारे म जानकारी प्राप्त होती है। इस ग्रन्थ को राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर ने प्रकाशित कर दिया है। डॉ जी एन शर्मा ने अपनी पुस्तक ' ए बिब्लियोग्राफी ऑफ मेडीवल राजस्थान ' के पृष्ठ सख्या 78 पर इस सम्बन्ध मे लिखा है कि, "ग्रन्थ म भारत की प्राचीन परम्परा को ध्यान मे रखत हुए मध्यकालीन सस्कृति के अन्तगत वीरता आदि का राजस्थानी भाषा म आकषक छन्दो मे अनूठा प्रदशन है। सम्पूण ग्रन्थ मे वणन ऐसा धारा प्रवाह चलता है कि जिसम पाठको की उत्कण्ठा निरन्तर अग्रसर होती जाती है। कवि महोदय ने यत्रतत्र अपने पाण्डित्य का प्रदशन ऐसी दक्षता से किया है कि प्राय कही पर भी मूल कथा म क्रम नही टूटा है।"

(ix) केशवदास कृत गज गुण रूपक

गज गुण रूपक नामक ग्रन्थ का लेखक केशवदास था जिसने जोधपुर के महाराजा गजसिंह के शासनकाल मे इस ग्रन्थ की रचना की थी। इसमें विभिन्न प्रकार की वेशभूषा एवं खाद्य पदार्थों का वर्णन किया गया है, जिससे हम राजस्थान में मुगलों के बढ़ते हुए प्रभाव के बारे में जानकारी प्राप्त होती है। इसके अतिरिक्त इस ग्रन्थ मे विवाह उत्सव एवं दशहरे के त्यौहार का भी बड़ा सुन्दर वर्णन किया गया है। इसका सम्पादन श्री सीताराम लालस ने किया था। यह ग्रन्थ राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान जोधपुर के द्वारा प्रकाशित किया जा चुका है।

(x) वीर भाण कृत राजरूपक

राजरूपक नामक ग्रन्थ की रचना रतनू चारण कवि वीर भाण के द्वारा की गई थी जिसने यह ग्रन्थ जोधपुर के महाराजा अभयसिंह के आदेश से लिखा था। इसमें अभयसिंह के मुगलों के साथ सम्बन्धों का वर्णन है। इससे शेरबुलन्द और अभयसिंह के बीच हुई लड़ाई के बारे मे जानकारी प्राप्त होती है। कवि इस युद्ध में जोधपुर महाराजा अभयसिंह की सेना मे मौजूद था इसलिये उसने अपनी रचना मे घटना का आंखो देखा वर्णन लिखा है। कवि ने इस महाकाव्य को 46 प्रकाशों मे लिखा था। इससे देसूरी, नागौर और नाडोल आदि के युद्धों के बारे में विस्तृत जानकारी प्राप्त होती है। युद्ध में भाग लेने वाले जैसा, हरनाथ एवं गिरधारी आदि वीरो का वर्णन भी इसमें उपलब्ध है। इससे उस समय की सामाजिक स्थिति के बारे मे भी जानकारी प्राप्त होती है। इसका सम्पादन पण्डित रामकरण ने किया था। यह ग्रन्थ नागरी प्रचारिणी सभा, काशी के द्वारा प्रकाशित कर दिया गया था।

(xi) बख्तराम साह कृत बुद्धिविलास

बुद्धिविलास नामक ग्रन्थ की रचना बख्तराम साह के द्वारा जयपुर में की गई थी। कवि ने इसमे आंखो देखी घटनाओं का वर्णन किया है। इससे हमे जयपुर शहर की स्थापना के बारे में महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त होती है। इस ग्रन्थ को डा० विद्याधर पाठक ने राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान जोधपुर के लिये सम्पादित कर दिया है, जिसका प्रकाशन भी हो चुका है।

(xii) मडन विजय सा कृत हम्मीरदेव चौपाई

हम्मीरदेव चौपाई नामक ग्रन्थ की रचना 1871 ई० मे मडन विजय सा के द्वारा की गई थी। इसमे रणथम्भोर के शासक हम्मीर की यश कीर्ति के बारे मे वर्णन किया गया है। इसके अतिरिक्त जोधराज कृत हम्मीर रासो (1828), राजरूप कृत हम्मीर रा छाडा (1921) एवं चन्द्र शेखर कृत हम्मीर हठ (1845) आदि ग्रन्थो से भी हम्मीर के बारे में जानकारी प्राप्त होती है।

(xiii) डॉ० श्रोत्रिय द्वारा सम्पादित खुमाणरासो

खुमाणरासो नामक ग्रन्थ का सम्पादन डॉ० कृष्णचन्द्र श्रोत्रिय द्वारा किया

जा चुका है, जो उदयपुर के निवासी थे। इस से मेवाड के प्राचीन इतिहास के बारे म महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त होती है।

(xiv) पृथ्वीराज राठौड कृत बेलि क्रिसन रुकमणी री

बेलि क्रिसन रुक्मणी री नामक ग्रन्थ की रचना कुवर पृथ्वीराज राठौड द्वारा की गई थी। यह ग्रथ ओजस्वी कविता के रूप म लिखा हुआ है। इसम 304 छद हैं। कवि अकबर के दरबार मे दरबारी था। इससे उस समय के त्यौंहारा, वश भूषा, रीति रिवाज एव रहन सहन के बारे म जानकारी प्राप्त होती है। इसके अतिरिक्त उस काल के साहित्यिक स्तर के बारे मे भी पता चलता है।

(xv) कवि हेमू कृत गुण भाषा

कवि हेमू ने गुण भाषा नामक ग्रन्थ की रचना की, जो जोधपुर के महाराजा गजसिंह के समकालीन था। इसम गजसिंह के राज्य विस्तार के बारे म वर्णन किया गया है। इसके अतिरिक्त इससे उस समय की वेश भूषा एव नगर योजना आदि के बारे म महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त होती है।

(xvi) सूर्यमल्ल मिश्रण कृत वश भास्कर

वश भास्कर नामक ग्रन्थ की रचना बूदी के चारण कवि सूर्यमल्ल मिश्रण द्वारा की गई थी। उसने यह ग्रथ कविता के रूप मे लिखा था। कवि ने भाटो की दन्त कथाओं को आधार बनाकर प्राचीन इतिहास का वर्णन किया है फिर भी यह ग्रन्थ महत्वपूर्ण ऐतिहासिक जानकारी देता है। इसमे बून्दी राज्य का विस्तृत एव राजपूताने के अन्य राज्यो के इतिहास का वर्णन सक्षिप्त रूप से किया गया है। इससे बूदी के जयपुर राज्य के साथ सम्बध, मराठो के राजस्थान पर आक्रमण एव उनका प्रभाव तथा अग्रेजी सत्ता के प्रवेश की घटनाओ के बारे म विस्तृत जानकारी प्राप्त होती ह। कवि ने ओजस्वी भाषा मे इस ग्रन्थ की रचना की है।

उपरोक्त सभी कृतियो का प्रयोग विद्वानो ने अपने ग्रन्थो म पूरक साधन के रूप में ही किया है। अधिकाश साहित्य की रचना राजकीय सरक्षण म की गई थी, इसलिये उनम अतिशयोक्तिपूर्ण वर्णन किया गया है तथा अपने स्वामी की आवश्यकता से अधिक प्रशसा की गई है। लेखको और कवियो ने उस समय मे प्रचलित दन्त-कथाओ एव कल्पनाओ को आधार बनाकर अपने ग्रन्थो की रचना की है, इसलिये इनकी रचनाओ म से ऐतिहासिक तथ्य की खोज करना बहुत कठिन कार्य है। तिथियों म असगतिया देखने को मिलती हैं फिर भी यह स्वीकार करना पडेगा कि इन कृतियो मे राजपूत पक्ष के बारे मे महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त होती है। इन कृतियो को राजस्थान के इतिहास के ऐतिहासिक स्रोत के रूप में प्रयोग किया जाना चाहिये।

राजस्थानी भाषा की कृतियो का महत्व

राजस्थानी भाषा म लिपिबद्ध कृतियो से महत्वपूर्ण ऐतिहासिक जानकारी प्राप्त होती है, जैसे कि —

(i) जोधपुर के महाराजा सूरसिंह की मृत्यु की सही तिथि लेखक द्वारा रचित ग्रन्थ गुण रूपक में मिलती है।

(ii) जयानक द्वारा रचित पृथ्वीराज विजय नामक ग्रन्थ से पृथ्वीराज चौहान के जन्म की सही तिथि के बारे में पता चलता है।

(iii) मालदेव और शेरशाह के बीच सुमेल का युद्ध किस तारीख को हुआ था यह जानकारी हमें फारसी भाषा में लिपिबद्ध स्रोतों से प्राप्त नहीं होती है। यह पुराना जोधपुर राज्य की ख्यात में मिलती है। इसी से यह पता चलता है कि 4 जनवरी, 1544 ई० को सुमेल का युद्ध लड़ा गया था।

(iv) दलपतविलास से अकबर की राजपूतों के प्रति नीति के बारे में महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त होती है।

(v) डॉ० रिफाकत अली ने अपने शोध प्रबन्ध "आमेर के कछवाहों के अकबर और जहांगीर के साथ सम्बन्ध" को फारसी साधनों का आधार बनाकर लिखा है। विद्वान लेखक ने जयपुर राजघराने के पास उपलब्ध ऐतिहासिक दस्तावेजों और पत्रों का प्रयोग नहीं किया।

(vi) डॉ० चन्द्र प्रकाश पिलानिया ने अपने शोध ग्रन्थ "सवाई जयसिंह की सांस्कृतिक देन" में फारसी भाषा के साधनों के अतिरिक्त राजस्थानी भाषा में लिपिबद्ध स्रोतों का प्रयोग किया है इससे यह सिद्ध हो गया है कि राजस्थानी भाषा में लिपिबद्ध साधन भी विश्वसनीय हैं। तथा उनके प्रति अविश्वास की जो धारणा पूर्व में शोधकर्त्ताओं में थी वह अब समाप्त हो चुकी है।

(vii) फारसी साधन कभी-कभी गलत जानकारी भी देते हैं जैसे कि जहांगीर ने अपनी आत्मकथा में लिखा है कि आमेर के शासक भारमल की मृत्यु के पश्चात उसका पुत्र भगवानदास शासक बना परन्तु अबुल फजल ने अकबरनामा में लिखा है कि भारमल के पश्चात् भगवन्तदास आमेर का शासक बना। 1965ई० से पूर्व सभी विद्वानों का यही मानना था कि भगवन्तदास और भगवानदास एक ही व्यक्ति के दो नाम थे। परन्तु डॉ० वी० एम० भार्गव ने आमेर की वंशावली और कुछ शिलालेखों के आधार पर यह सिद्ध कर दिया कि भारमल के ज्येष्ठ पुत्र का नाम भगवन्तदास एवं कनिष्ठ पुत्र का नाम भगवानदास था। भारमल की मृत्यु के पश्चात् कुछ महत्वपूर्ण जागीरदारों ने उसके छोटे पुत्र भगवानदास को शासक बना दिया था, जबकि मुगल बादशाह अकबर ने आमेर की गद्दी का टीका भारमल के बड़े पुत्र भगवन्तदास को दे दिया था और छोटे पुत्र भगवानदास को लवाण का जागीरदार बना दिया गया। इस प्रकार मुगलों के सहयोग से भगवन्तदास आमेर का शासक बना।

उक्त उदाहरणों से यह स्पष्ट हो जाता है कि राजस्थानी भाषा में लिपिबद्ध साहित्य राजस्थान के इतिहास और संस्कृति पर महत्वपूर्ण प्रकाश डालता है। यह

तथ्य है कि अधिकाश राजस्थानी साहित्य चारणो ने लिखा था परन्तु मुहणोत नेणसी डॉ० गौरीशकर हीराचन्द ओझा, तथा दीवान बहादुर हरविलास शारदा आदि चारण जाति से नही थे। राजस्थान के इतिहास के निर्माण मे कर्नल टॉड का योगदान उल्लेखनीय है। आधुनिक काल के इतिहासकारो मे डॉ० दशरथ शर्मा डा० गोपीनाथ शर्मा डॉ० ए० एल० श्रीवास्तव डॉ० ए० सी बनर्जी डॉ के आर कानूनगो डॉ० सतीशचन्द्र, डॉ० परमात्मा सरन एव डॉ० वी एस भागव आदि के नाम उल्लेखनीय हैं, जिन्होने कई नये तथ्य आधुनिक पीढी के पाठको एव विद्यार्थियो के समक्ष प्रस्तुत किये हे।

3 उर्दू-फारसी भाषा मे लिपिबद्ध महत्वपूर्ण कृतिया

मध्यकाल मे उर्दू-फारसी भाषा मे लिपिबद्ध रचनाओ से राजस्थान के इतिहास के बारे मे जानकारी प्राप्त होती है। ये रचनाए निम्नलिखित है —

1 बाबर कृत तुजुक ए-बाबरी
2 गुलबदन बेगम–हुमायू नामा
3 जौहर आफताबची तजकिरात उल वाकियात
4 मिर्जा हैदर-तारीखे रशीदी

राजकीय इतिहासकार

1 अबुल फजल- अकबरनामा एव आईने अकबरी
2 बदायूनी—मुन्तखाब उत तवारीख
3 मोतमिद खा—इकबालनामा ए जहागीरी
4 जहागीर— तुजुक ए-जहागीरी
5 मुहम्मद अमीन कजवीनी—पादशाह नामा
6 कामगार हुसैन—मासिर-ए जहागीरी
7 अब्दुल हमीद लाहौरी—पादशाह नामा
8 मिर्जा मोहम्मद काजिम—आलमगीरनामा

निजी व्यक्तियो की ऐतिहासिक कृतियां

1 फरिश्ता —तारीख ए फरिश्ता
2 अब्बास खा सरवानी—तारीख ए शेरशाही
3 निजामुद्दीन बख्शी — तबकात ए अकबरी
4 'मोहम्मद साकी मुस्तैद खा—मासीर ए आलमगीरी
5 सुजानराय खत्री—खुलासुत उत-तवारीख
6 ईश्वरदास नागर—फुतूहात ए आलमगीरी
7 खाफी खा — मुन्तखाब उल-लुबाब
8 भीमसेन—नुस्ख ए दिलकुशा

9 शिवदास —मुनव्वर ए कलाम

10 गुलाम हुसैन—सियार उल मुताखरीन

राजस्थान का सलग (लगातार) इतिहास लिखने वाले प्रमुख इतिहासकार

1 कालीराम कायस्थ —तारीख ए राजस्थान

2 मुंशी ज्वाला सहाय—वाकया ए राजपूताना

तारीख ए राजस्थान

कालीराम कायस्थ ने 'तारीख ए-राजस्थान'' नामक ग्रंथ 1793 ई म लिखा था जो अजमेर का रहने वाला था। उसने यह ग्रन्थ जयपुर महाराजा प्रतापसिंह के आदेश से लिखा था। यह मूल प्रति फारसी भाषा म 200 पृष्ठों म लिपिबद्ध है जिसकी एक प्रति प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, टाक मे है। इसका सक्षिप्त हिन्दी अनुवाद डा वी एस भागव के पास उपलब्ध है।

इस ग्र थ को लेखक ने तीन भागो मे लिखा था। प्रथम भाग मे प्रतापसिंह के पूवजो की वशावली के बारे मे जानकारी प्राप्त होती है जो नारायणा से प्रारम्भ होती है। द्वितीय भाग से हाडौती, मेवाड तथा मारवाड के बारे मे ऐतिहासिक जानकारी मिलती है। लेकिन यह भाग पूरा नही है। तृतीय भाग टोक के प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान की उपलब्ध प्रति मे नही है। इस ग्रथ से जयपुर के इतिहास के बारे मे कुछ नये तथ्य प्राप्त हो सकते हैं।

उर्दू फारसी भाषा मे लिपिबद्ध साहित्य से हमे मुगलो के राजपूत राजाओ से सम्बन्धो के बारे मे वो जानकारी भी प्राप्त होती है जो राजस्थानी भाषा म लिपिबद्ध कृतियो से नही मिलती है। फारसी भाषा म लिपिबद्ध कृतिया के अधिकाश लेखक मुसलमान थे। अत उनकी रचनाओ म धार्मिक कट्टरता की भावनायें स्पष्ट रूप से दिखाई देती हैं। इन कमियों के बावजूद भी उर्दू फारसी भाषा म लिपिबद्ध साहित्य ऐतिहासिक दृष्टिकोण से काफी महत्वपूर्ण है। फारसी साहित्य मे घटनाओ का वणन क्रमबद्ध रूप से मिलता है एव उनमे दी हुई तिथियां भी सही हैं। घटनाओ के साथ तिथिया का उल्लेख भी अधिक किया गया है। अधिकाश फारसी लेखको न आखो देखी घटनाओ का वणन ही अपने ग्रथ म किया है। इस साहित्य से हमे मुगल दरबार म राजपूतो की नियुक्ति पदोन्नति एव उनकी स्थिति के बारे मे जानकारी प्राप्त होती है।

(1) अलबेरूनी कृत तारीख उल हिन्द

इस ग्रथ मे 1000 ई के राजस्थान की सामाजिक एव आर्थिक अवस्था के बारे म जानकारी प्राप्त होती है।

(II)अल उतबी कृत तारीख ए यामिनी

इस ग्रथ में महमूद गजनवी का राजपूतों के साथ हुए सघर्ष का अच्छा वर्णन किया गया है।

(iii) मिनहाज उद्दीन कृत तबकात ए नासिरी

इस ग्रन्थ मे मेवातियो तथा जालौर मे पठानो की सत्ता की स्थापना का वर्णन है। इससे यह भी पता चलता है कि नागौर, जालौर तथा अजमेर आदि मे मुस्लिम प्रभाव किस प्रकार स्थापित हुआ तथा राजपूतो ने कैसा संघर्ष किया था।

(iv) हसन निजामी कृत ताज उल मासिर

ताज-उल मासिर मे राजस्थान मे मुस्लिम प्रभाव किस प्रकार स्थपित हुआ, इसका अच्छा वर्णन किया गया है। लेखक ने अपने ग्रन्थ म यह भी लिखा है कि मुस्लिम राज्य की स्थापना से पूर्व अजमेर समृद्ध था तथा उसके पश्चात उसका पतन प्रारम्भ हो गया था।

(v) अमीर खुसरो कृत तारीख ए अलाई

तारीख ए अलाई मे अमीर खुसरो ने अलाउद्दीन खिलजी द्वारा चित्तौड तथा रणथम्भौर पर किये गये आक्रमणो का अच्छा वर्णन किया है। इन कृतियो से प्रारम्भिक मध्ययुगीन राजस्थान की राजनीतिक धार्मिक आर्थिक सामाजिक एव भौगोलिक स्थिति के बारे म जानकारी प्राप्त होती है। इसके अतिरिक्त घटनाओ के तिथिक्रम को सुलझाने मे भी ये काफी महत्वपूर्ण सिद्ध हुए है।

(vi) बाबर बाबरनामा

बाबरनामा से खानवा युद्ध के बारे मे महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त होती है। इस ग्रन्थ स पता चलता है कि बाबर को भारत पर आक्रमण करने के लिए सागा द्वारा निमन्त्रण भिजवाया गया था, परन्तु बाबर द्वारा सागा के लिए काफिर शब्द का प्रयोग करना इस बात का प्रतीक है कि वह भी धार्मिक दृष्टि से कट्टर था।

(vii) गुलबदन बेगम एव जौहर की कृतियां

इन दोनो ने अपने अपने ग्रन्थ अकबर के आदेश से लिखे थे। इनसे हुमायूँ के मेवाड और मारवाड के शासको के सम्बन्धो बारे मे महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त होती है।

(viii) अबुल फजल और बदायूँनी की कृतिया

ये दोनो ही इतिहासकार राजस्थान के निवासी थे। हल्दीघाटी का युद्ध मुगल सेना ने राणा प्रताप से लडा था। उस समय बदायूँनी मुगल सेना मे मौजूद था। उसने अपनी तवारीख म लिखा है कि मुगल सेना जिस पक्ष के राजपूतो के विरुद्ध संघर्ष कर रही है वही काफिरो के विरुद्ध जिहाद है। बदायूँनी के ये विचार उसकी धार्मिक कट्टरता पर प्रकाश डालते है।

(ix) निजामुद्दीन अहमद तबकात ए अकबरी

निजामुद्दीन की तवारीख से पता चलता है कि जिस समय मालदेव निर्वासित मुगल सम्राट हुमायूँ को सहायता देने के बारे मे विचार कर रहा था उस समय शेरशाह की सेना द्वारा नागौर पर अधिकार कर लिया गया था। जब मालदेव

की सेना और शेरशाह के बीच सुमेल का युद्ध हुआ तब मख्वास खा सरवानी शेरशाह की सेना मे मौजूद था। इससे यह भी पता चलता है कि आमेर के शासक भारमल की पुत्री के गर्भ से राजकुमार सलीम का जन्म हुआ था।

अकबर के समय से लेकर पिछले मुगल बादशाहों तक जिन राजाओ ने मुगलों की अधीनता स्वीकार कर ली उनको मुगल शासको द्वारा मनसब, पद, जमींदारियां और प्रतिष्ठा प्राप्त हुई और उन्होंने मुगल साम्राज्य की रक्षा के लिए दक्षिण तथा सीमान्त प्रान्तो मे युद्ध लड़े और उच्च सूबेदारी प्राप्त की। इन व्यक्तियो की उपलब्धियों के बारे मे इन फारसी तवारीखो म विस्तारपूर्वक वर्णन किया गया है।

(x) जहांगीर-तुजुक ए-जहांगीरी

जहांगीर ने अपनी आत्मकथा म यह लिखकर कि भारमल का पुत्र भगवन्त दास के स्थान पर भगवानदास था, इतिहासकारो के लिए विवाद का विषय बना दिया। इसमे यह भी उल्लेख है कि अकबर ने जोधाबाई के साथ विवाह नहीं किया था और खुरम उसका तृतीय पुत्र था।

(xi) इसी प्रकार जहांगीरनामा शाहजहानामा, आलमगीरनामा आदि हैं

इनमे राजस्थानी शासको द्वारा की गई मुगल सम्राटो की सवाओ तथा उनके द्वारा किये गये विरोध का वर्णन है। इनम उस समय के कस्बो, नगरो, गावो और जनजीवन का वर्णन किया गया है जिससे उस काल के सामाजिक जीवन के बारे म जानकारी प्राप्त होती है। इन इतिहासकारो ने राजस्थान म जहा कही भी तुर्कों या मुगल सत्ता की स्थापना हुई उसका विस्तार से वर्णन किया है।

(xii) ईश्वरदास नागर कृत फुतूहाते आलमगीरी

इस ग्रन्थ से हमे दुर्गादास की कूटनीतिज्ञता के बारे मे जानकारी प्राप्त होती है कि किस प्रकार से उसने औरंगजेब को उसके पौत्र एव पौत्री को सौंपकर अपने स्वामी अजीतसिंह के लिये मनसब और वतन जागीर प्राप्त की था।

(xiii) अदब ए आलमगीरी

इससे पता चलता है कि 1678 ई के बाद औरंगजेब ने राजपूतो को महत्वपूर्ण पदो पर नियुक्त करना कम कर दिया था।

(xiv) शिवदास कृत मुनव्वर ए कलाम

इस तवारीख से पता चलता है कि जोधपुर के महाराजा अजीतसिंह ने अपनी पुत्री इन्द्रकुवर का विवाह मुगल सम्राट फरुखसियर स किया था।

(xv) शाहनवाज खा कृत-मआसिर उल उमरा

इस तवारीख से राजस्थान के अनेक राजाओ राजकुमारो तथा सामन्तों की जीवनियो के बारे मे जानकारी प्राप्त होती है, जो ऐतिहासिक दृष्टिकोण स काफी महत्वपूर्ण है।

मुगल दरबार के अखबारात महत्वपूर्ण ऐतिहासिक घटनाओं पर प्रकाश डालते है। इस प्रकार फारसी भाषा मे लिपिबद्ध कृतियो से महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त होती है।

फारसी साधनो के दोष

(i) पहली कमी यह है कि फारसी साधनो से हमे केवल एक पक्षीय जानकारी प्राप्त होती है।

(ii) दूसरी कमी यह है कि लेखको ने अपने सुलतान से सम्बन्धित अप्रिय घटनाओं का वर्णन नही किया है, जैसे कि—अमीर खुसरो जो कि अलाउद्दीन खिलजी का दरबारी इतिहासकार था, चित्तौड के अभियान मे मौजूद था। उसने चित्तौड के अभियान का वर्णन करते हुए अपनी तवारीख मे सुलेमान और बिल्कीस की प्रेम कहानी लिखी है, जिसे आधार बनाकर डा ए एल श्रीवास्तव ने यह सिद्ध किया था कि अलाउद्दीन खिलजी के चित्तौड पर आक्रमण करने का मुख्य कारण राणा रतनसिंह की सुन्दर पत्नी पद्मनी को प्राप्त करना था।

(iii) तीसरी कमी यह है कि फारसी तवारीख के लेखक घटनाओं का वर्णन करते समय अलकृत भाषा का प्रयोग करते थे। अबुल फजल की शैली इस बात का स्पष्ट प्रमाण है।

(iv) चौथी कमी यह दिखाई देती है कि फारसी तवारीख के लेखकों ने घटनाओं का बहुत सक्षिप्त वर्णन किया है जैसे कि औरगजेब ने जोधपुर मे मदिरो को तुडवाया और उनकी मूर्तियो को 700 बैलगाडियो मे लदवाकर दिल्ली भिजवा दिया था। इससे स्पष्ट हो जाता है कि हमे राजस्थान के इतिहास की जानकारी के लिए केवल फारसी साधनो पर ही निर्भर नही रहना चाहिए।

इसका यह अर्थ नहीं है कि हम राजस्थान के इतिहास की जानकारी के लिए स्थानीय साधनो को अधिक महत्व दें। डॉ० जी० एन० शर्मा ने अपने शोध ग्रन्थ मेवाड एण्ड दी मुगल एम्परस' मे एव डॉ० जी० डी० शर्मा ने 'राजपूत पोलिटी" मे राजस्थानी भाषा मे लिपिबद्ध ख्यातो एव वार्ताओं को अधिक महत्व दिया है। तभी से वर्तमान शोधकर्ता इस साहित्य के प्रति अधिक आकर्षित होने लगे हैं। ख्यातो, रासो वाता एव वशावलियो मे घटनाओं का वर्णन क्रमबद्ध रूप से नही किया गया है। इनमे अकित अधिकाश तिथियां भी सही नहीं है। ये रचनायें समकालीन नही है तथा किवदन्तियो के आधार पर लिखी गई हैं। इसके अतिरिक्त इन रचनाओं के लेखको का मुख्य उद्देश्य अपने राजाओं की प्रशसा करना रहा है इसलिये इनमे घटनाओं के बारे मे अतिशयोक्तिपूर्ण वर्णन मिलता है।

कुछ इतिहासकारो ने केवल एपिग्राफिक साधनो को आधार बनाकर ही अपने ग्रन्थ लिखे है। डॉ० गौरी शकर हीराचन्द ओझा ने शिलालेखो और ख्यातो को आधार बनाकर ही अपने ग्रन्थ लिखे है। श्यामलदास ने फारसी ग्रन्थो राजस्थानी

की सेना और शेरशाह के बीच सुमेल का युद्ध हुआ तब भगवानदास सरवानी शेरशाह की सेना मे मौजूद था। इससे यह भी पता चलता है कि आमेर के शासक भारमल की पुत्री के गर्भ से राजकुमार सलीम का जन्म हुआ था।

अकबर के समय से लेकर पिछले मुगल बादशाहो तक जिन राजाओ ने मुगलो की अधीनता स्वीकार कर ली उनको मुगल शासको द्वारा मनसब, पद, जमींदारियां और प्रतिष्ठा प्राप्त हुई और उन्होने मुगल साम्राज्य की रक्षा के लिए दक्षिण तथा सीमान्त प्रान्तो में युद्ध लडे और उच्च सूबेदारी प्राप्त की। इस व्यक्तियो की उपलब्धियो के बारे म इन फारसी तवारीखों म विस्तारपूर्वक वर्णन किया गया है।

(x) जहांगीर-तुजुक ए-जहांगीरी

जहांगीर ने अपनी आत्मकथा मे यह लिखकर कि भारमल का पुत्र भगवन्त दास के स्थान पर भगवानदास था, इतिहासकारो के लिए विवाद का विषय बना दिया। इसमे यह भी उल्लेख है कि अकबर ने जोधाबाई के साथ विवाह नही किया था और खुर्रम उसका तृतीय पुत्र था।

(xi) इसी प्रकार जहांगीरनामा शाहजहांनामा, आलमगीरनामा आदि हैं

इनमे राजस्थानी शासको द्वारा की गई मुगल सम्राटो की सेवाओ तथा उनके द्वारा किये गये विरोध का वर्णन है। इनमे उस समय के कस्बा, नगरा, गावा और जनजीवन का वर्णन किया गया है, जिससे उस काल के सामाजिक जीवन के बारे मे जानकारी प्राप्त होती है। इन इतिहासकारा न राजस्थान म जहा कहीं भी तुर्की या मुगल सत्ता की स्थापना हुई उसका विस्तार से वर्णन किया है।

(xii) ईश्वरदास नागर कृत फुतूहाते आलमगीरी

इस ग्रन्थ से हमे दुर्गादास की कूटनीतिज्ञता के बारे म जानकारी प्राप्त होती है कि किस प्रकार से उसने औरगजेब को उसके पौत्र एव पौत्री को सौंपकर अपने स्वामी अजीतसिंह के लिये मनसब और वतन जागीर प्राप्त की था।

(xiii) अदब ए आलमगीरी

इसस पता चलता है कि 1678 ई के बाद औरगजेब ने राजपूतो को महत्वपूर्ण पदो पर नियुक्त करना कम कर दिया था।

(xiv) शिवदास कृत मुनव्वर ए कलाम

इस तवारीख स पता चलता है कि जोधपुर के महाराजा अजीतसिंह ने अपनी पुत्री इन्द्रकुवर का विवाह मुगल सम्राट फरुखसियर से किया था।

(xv) शाहनवाज खा कृत-मआसिर उल उमरा

इस तवारीख से राजस्थान के अनेक राजाओ राजकुमारा तथा सामन्तो की जीवनियो के बारे में जानकारी प्राप्त होती है, जो एतिहासिक दृष्टिकोण से काफी महत्वपूर्ण है।

मुगल दरबार के अखबारात महत्वपूर्ण ऐतिहासिक घटनाओ पर प्रकाश डालते है। इस प्रकार फारसी भाषा मे लिपिबद्ध कृतियो से महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त होती है।

फारसी साधनो के दोष

(i) पहली कमी यह है कि फारसी साधनो से हमे केवल एक पक्षीय जानकारी प्राप्त होती है।

(ii) दूसरी कमी यह है कि लेखको ने अपने सुलतान से सम्बन्धित अप्रिय घटनाओ का वर्णन नही किया है, जैसे कि—अमीर खुसरो जो कि अलाउद्दीन खिलजी का दरबारी इतिहासकार था चित्तौड के अभियान मे मौजूद था। उसने चित्तौड के अभियान का वर्णन करते हुए अपनी तवारीख मे सुलेमान और बिल्कीस की प्रेम कहानी लिखी है, जिसे आधार बनाकर डा ए एल श्रीवास्तव ने यह सिद्ध किया था कि अलाउद्दीन खिलजी के चित्तौड पर आक्रमण करने का मुख्य कारण राणा रतनसिह की सुदर पत्नी पद्मनी को प्राप्त करना था।

(iii) तीसरी कमी यह है कि फारसी तवारीख के लेखक घटनाओ का वर्णन करते समय अलकृत भाषा का प्रयोग करते थे। अबुल फजल की शली इस बात का स्पष्ट प्रमाण है।

(iv) चौथी कमी यह दिखाई देती है कि फारसी तवारीख के लेखकों ने घटनाओ का बहुत सक्षिप्त वर्णन किया है जैसे कि औरगजेब ने जोधपुर मे मन्दिरो को तुडवाया और उनकी मूर्तिया को 700 बैलगाडियो मे लदवाकर दिल्ली भिजवा दिया था। इससे स्पष्ट हो जाता है कि हम राजस्थान के इतिहास की जानकारी के लिए केवल फारसी साधनो पर ही निभर नही रहना चाहिए।

इसका यह अथ नही है कि हम राजस्थान के इतिहास की जानकारी के लिए स्थानीय साधना को अधिक महत्व दें। डॉ० जी० एन० शर्मा ने अपने शोध ग्रन्थ मेवाड एण्ड दी मुगल एम्परस" मे एव डॉ० जी० डी० शर्मा ने राजपूत पोलिटी" म राजस्थानी भाषा म लिपिबद्ध ख्याता एव वार्ताओ को अधिक महत्व दिया है। तभी से वतमान शोधकर्ता इस साहित्य के प्रति अधिक आकर्षित होने लगे हैं। ख्याता, रासो बाता एव वशावलिया म घटनाओ का वर्णन क्रमबद्ध रूप स नही किया गया है। इनमे अकित अधिकाश तिथिया भी सही नहीं है। ये रचनायें समकालीन नही है तथा किवदन्तिया के आधार पर लिखी गई है। इसके अतिरिक्त इन रचनाओ के लेखकों का मुख्य उद्देश्य अपने राजाओ की प्रशसा करना रहा है इसलिये इनमे घटनाओ के बारे मे अतिशयोक्तिपूर्ण वर्णन मिलता है।

कुछ इतिहासकारो ने केवल एपिग्राफिक साधनो को आधार बनाकर ही अपने ग्रन्थ लिखे है। डॉ० गौरी शकर हीराचन्द ओझा ने शिलालेखो और ख्याता को आधार बनाकर ही अपने ग्रन्थ लिखे है। श्यामलदास ने फारसी ग्रन्थो राजस्थानी

भाषा म लिपिबद्ध साहित्य एव एपिग्राफिक स्रोतो का आधार बनाकर अपना ग्रन्थ वीर विनोद को लिखा था। लेकिन उस समय तक पर्याप्त साधन प्रकाश म नहीं आये थे, इसलिये श्यामलदास उनका प्रयोग अपने इस ग्रन्थ म नहीं कर सका। श्री रामकरण आसोपा ने मारवाड का मूल इतिहास नामक ग्रन्थ लिखा। उन्होंने इस ग्रन्थ म जिस सामग्री का प्रयोग किया उसम से कुछ अब उपलब्ध नहीं होती है। जैसा कि श्री आसोपा ने ख्यात का आधार बनाकर अपनी पुस्तक म जसवन्तसिंह प्रथम का वर्णन करते हुए यह लिखा है कि महाराजा जसवन्तसिंह ने औरंगजेब की धार्मिक नीति का विरोध करते हुए काबुल म यह कहा था कि व वहा की मस्जिदों की ईंट से ईंट बजा देंगे।' डा० वी एस भार्गव ने इस ख्यात क प्रश्न क बारे मे काफी खोजबीन की परन्तु उन्हे यह ख्यात प्राप्त नहीं हो सकी।

कर्नल टॉड, रऊ आसोपा, ओझा एव श्यामलदास क ग्रन्थो म जो कमियां रह गई थी उन्हे वर्तमान समय क इतिहासकार शोध निबन्धो क द्वारा दूर रह हैं। अतएव राजस्थान का इतिहास इन प्रकाशित तथा अप्रकाशित शोध ग्रन्थो क द्वारा जाना जा सकता है।

अभी भी बहुत सी ऐतिहासिक सामग्री निजी व्यक्तियो एव भूतपूर्व जागीरदारो के पास मौजूद है, जिसकी खोज म विद्वान लगे हुए है। भारतीय इतिहास अनुसन्धान परिषद, नई दिल्ली एस कार्यों क लिए अनुदान द रहा है। इस सामग्री क प्रकाश म आने के बाद राजस्थान के इतिहास को फिर स लिखा जाना चाहिए। पुनर्लेखन के समय राजस्थानी फारसी सस्कृत और बाकी साहित्य का सन्तुलित ढग स प्रयोग करना चाहिए। तभी विश्वसनीय इतिहास लिखा जाना सम्भव हो सकेगा। परन्तु उपलब्ध साहित्य का प्रयोग पूरक साधन के रूप म ही किया जाना चाहिए।

4 सस्कृत भाषा में लिपिबद्ध महत्वपूर्ण कृतिया

1 न्यायचन्द्र सूरी—हम्मीर महाकाव्य
2 जयनक कृत—पृथ्वीराज विजय
3 महाराणा कुम्भा कृत—एकलिंग महात्म्य
4 रणछोड भट्ट कृत—अमरकाव्य वंशावली
5 सदाशिव कृत—राज रत्नाकर
6 जगजीवन भट्ट कृत—अजीतोदय
7 पण्डित बालकृष्ण दीक्षित कृत—अजीत चरित्र
8 मण्डन कृत—राजवल्लभ
9 मेरुतुंग कृत—प्रबन्ध चिन्तामणि
10 राजशेखर कृत—प्रबन्ध कोष
11 सदाशिव कृत—राज रत्नाकर
12 जयसोम कृत— कर्मचन्द वंशोत्कीर्तन के काव्यम

13 सोमेश्वर कृत—कीर्ति कौमुदी
14 पण्डित जीवधर—अमरसार
15 मोहनभट्ट कृत—जगतसिंह शास्त्र
16 रघुनाथ कृत—जगतसिंह काव्य
17 भट्टि काव्य
18 अमर भूषण

संस्कृत के इन ग्रन्थों से बहुमूल्य ऐतिहासिक जानकारी प्राप्त होती है।

(i) न्यायचन्द्र सूरी कृत हम्मीर महाकाव्य

न्यायचन्द्र सूरी ने हम्मीर महाकाव्य नामक ग्रन्थ समसामयिक ऐतिहासिक सामग्री को आधार बनाकर बडी छानबीन के साथ लिखा था। उसने इस ग्रन्थ की रचना रणथम्भोर के चौहान शासक हम्मीर की मृत्यु के लगभग 100 वर्ष पश्चात की थी। इससे रणथम्भोर के चौहान शासकों के बारे में महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त होती है। इसमें पता चलता है कि अलाउद्दीन ने रणथम्भोर पर विजय प्राप्त की थी तथा उस समय की धार्मिक एवं सामाजिक जीवन की झांकी भी इसमें मिल जाती है। हम्मीर की उपलब्धियों पर इस ग्रन्थ से अच्छा प्रकाश पडता है।

(ii) जयानक कृत पृथ्वीराज विजय

जयानक ने पृथ्वीराज विजय नामक ग्रन्थ 12वीं शताब्दी के अन्तिम चरण में लिखा था। इसमें चौहानों के वंशक्रम का अच्छा वर्णन किया गया है। इससे पता चलता है कि अजमेर नगर का उत्तरोत्तर विकास होने से यह एक समृद्ध नगर बन गया था। इससे पृथ्वीराज तृतीय की कला और साहित्य के प्रति रुचि के बारे में पता चलता है। कवि ने पृथ्वीराज के नक्षत्रों के आधार पर यह कल्पना की है कि सांभर झील पर इसका अधिकार बना रहेगा। यह कल्पना सही नहीं उतरी परन्तु इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि मोहम्मद के आक्रमण के पूर्व ही कवि अपना ग्रन्थ की रचना कर चुका था। इसका अंग्रेजी में अनुवाद डा हरविलास शारदा ने किया था जो प्रकाशित हो चुका है।

(iii) महाराणा कुम्भा द्वारा रचित एकलिंग महात्म्य

महाराणा कुम्भा ने एकलिंग महात्म्य नामक ग्रन्थ की रचना की थी। इसके राजवर्णन नामक अध्याय से महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त होती है। भाटों की पुस्तकों को आधार बनाकर गुहिलों की प्राचीन वंशावली तैयार की गई थी जिसे अधिक विश्वसनीय नहीं माना जा सकता। इससे 15 वीं शताब्दी की वर्ण व्यवस्था आश्रम-व्यवस्था आदि के बारे में महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त होती है। इस प्रकार उस समय के समाज के संगठन को समझने के लिए यह ग्रन्थ बहुत उपयोगी है। इसमें चित्तौड तथा एकलिंगजी के सम्बन्ध का बहुत रोचक वर्णन मिलता है।

(iv) रणछोड भटट कृत अमरकाव्य वंशावली

रणछोड भटट ने इस ग्रन्थ की रचना 1675 ई मे की थी, जो मेवाड़ के महाराणा राजसिंह का दरबारी कवि था। लेखक जो वर्णन राजप्रशस्ति म नहीं कर सका उसका वर्णन उसने इस ग्रन्थ म कर दिया। इसम उदयपुर के शासको की उपलब्धियो का वर्णन किया गया है। इसके पश्चात् उसने धार्मिक (धर्म यात्राए) एवं सामाजिक (दीपावली जौहर तथा तुलादान) स्थिति के बारे म वर्णन किया है। इससे उस समय के सैनिकों की वेशभूषा एव युद्ध के साधनो पर अच्छा प्रकाश पड़ता है।

(v) सदाशिव कृत राज रत्नाकर

सदाशिव ने राज रत्नाकर नामक ग्रन्थ की रचना की। इसम 22 सर्ग हैं। उसने यह ग्रन्थ महाराणा राजसिंह के समय मे लिखा था। इसका राजवर्णन भाटों की पुस्तको को आधार बनाकर लिखा गया है परन्तु महाराणा राजसिंह के समय के दरबारी जीवन एव सामाजिक स्थिति का चित्रण कवि ने अपनी व्यक्तिगत जानकारी के आधार पर लिखा है। इससे उस काल के पठन पाठन के तरीके एव पाठ्यक्रम के बारे मे पता चलता है। इसके अतिरिक्त यह ग्रन्थ 17 वी शताब्दी के युद्धो और सन्धियो पर भी प्रकाश डालता है।

(vi) जगजीवन भटट कृत अजीतोदय

जगजीवन भटट ने अजीतोदय नामक ग्रन्थ की रचना की थी जो जोधपुर के महाराजा अजीतसिंह का दरबारी कवि था। इससे मारवाड की ऐतिहासिक घटनाओ के बारे म जानकारी प्राप्त होती है। विशेष रूप मे इसम जसवन्तसिंह तथा अजीतसिंह के मुगलो से सम्बन्ध का विस्तृत वर्णन है। उस समय की परम्परा एवं सामाजिक संगठन पर भी यह ग्रन्थ अच्छा प्रकाश डालता है। लेखक ने जन्म, विवाह एव मृत्यु आदि संस्कारों का अच्छा वर्णन किया है। इसम जोधपुर के नगर का तथा मण्डोर के बागो का अच्छा विवरण है।

(vii) मण्डन कृत राजवल्लभ

इस ग्रन्थ की रचना मण्डन ने महाराणा कुम्भा के समय म की, जो उस समय का प्रसिद्ध शिल्पकार था। इससे 15 वी शताब्दी की ऐतिहासिक जानकारी प्राप्त होती है। इसमें 14 अध्याय है। इससे उस समय के नगर गाव दुर्ग, राज प्रासाद मन्दिर और बाजार आदि की निर्माण पद्धति के बारे मे जानकारी प्राप्त होती है। इससे पता चलता है कि नगर या गावो म मार्गों की व्यवस्था कैसी होनी चाहिये तथा राजप्रासाद के विविध भाग कैसे बनाये जाने चाहिए। इससे हमे 15 वीं शताब्दी की वास्तुकला के स्तर को समझने के बारे म जानकारी मिलती है।

(viii) भटि्ट काव्य

इसकी रचना सम्भवत 15 वीं शताब्दी म हुई थी। इसमे जैसलमेर के शासक भीम की मथुरा और वृन्दावन यात्रा के बारे मे जानकारी प्राप्त होती है।

महाराजा अमरसिंह के राजप्रासादो का एव तुलादान का इसमें सुन्दर वर्णन किया गया है। इसके अतिरिक्त इस ग्रन्थ से उस समय की राजनीतिक और सामाजिक अवस्था के बारे म जानकारी प्राप्त होती है।

(IX) जयसोम कृत कर्मचन्द वंशोकीर्तनकं काव्यम्

इसका रचियता जयसोम नामक कवि था, जो बीकानेर के मन्त्री कर्मचन्द नामी पर आश्रित था। यह काव्य श्लोको में लिखा हुआ है। इससे बीकानेर के नगर, बाजार, राजप्रासाद, फाटक एव बस्तियो के बारे म जानकारी प्राप्त होती है। यह ग्रन्थ बीकानेर के शासको के वैभव एव विद्या के प्रति रुचि पर भी प्रकाश डालता है। इसस मन्दिर, पुस्तकालय, पाठशालाएँ आदि 16 वी शताब्दी का सस्थाओ के बारे म जानकारी मिलती है।

(X) पण्डित जीवधर कृत अमरसार

इस ग्रन्थ का रचियता पण्डित जीवधर था। इसम महाराणा प्रताप और अमरसिंह प्रथम की उपलब्धियो का अच्छा वर्णन है। इससे उस समय क आमोद प्रमोद रहन सहन एव जनजीवन के बारे मे जानकारी प्राप्त होती है।

(XI) मोहन भट्ट कृत जगतसिंह शास्त्र

मोहन भट्ट ने इस ग्रन्थ की रचना मेवाड के महाराणा जगतसिंह के समय म की थी। इसस जगतसिंह के समय की एतिहासिक घटनाओ के बारे म जानकारी प्राप्त होती है।

उक्त कृतियो मे से अधिकांश समकालीन है, जो राजाओ की आज्ञा से लिखी गई थी। इसलिए यह साहित्य उस समय की विश्वसनीय सूचना देता है। परन्तु वर्तमान पीढ़ी के शोधकर्ताओ को सस्कृत भाषा का ज्ञान नही होने से वे इन कृतियो का मुक्त रूप से प्रयोग नही कर पा रहे है।

5 जैन धर्म का साहित्य

राजस्थान म जैसलमेर, बीकानेर भण्डी एव महावीर पुस्तकालय, जयपुर म सग्रहीत जैन साहित्य ऐतिहासिक जानकारी का महत्वपूर्ण स्रोत है। यह साहित्य मध्यकालीन राजस्थान की सामाजिक, धार्मिक एव सास्कृतिक स्थिति पर अच्छा प्रकाश डालता है। अधिकाश साहित्य राजस्थानी या सस्कृत भाषा म काव्य मे लिखा हुआ है, जो 14 वी शताब्दी के पश्चात् का है। इसम लेखको ने घटनाओ का वर्णन बहुत सक्षेप म किया है।

(I) नयचन्द्र सूरी कृत हम्मीर महाकाव्य

इस ऐतिहासिक महाकाव्य का रचियता नयचन्द्र सूरी था, जिसने 1400ई म इस ग्रन्थ की रचना की। इसमे 14 सर्ग है तथा रणथम्भोर के चौहान शासकों की उपलब्धियो का वर्णन किया गया है। विशेष रूप से यह ग्रन्थ रणथम्भोर के चौहान शासक हम्मीर के कार्यों पर प्रकाश डालता है। इससे मध्यकाल की राजपूतों

की युद्ध प्रणाली के बारे में जानकारी प्राप्त होती है। इसमें यह भी पता चलता है कि राजपूतों ने अफगान एवं तुर्कों के सम्पर्क में आने के बाद अपनी सैन्य प्रणाली में क्या क्या सुधार किये। इसमें उस समय की सामाजिक परम्पराओं एवं प्रथाओं की भी झांकी मिलती है। इस महाकाव्य के 13 एवं 14 वें सर्ग में उस समय की अतिथि सत्कार की प्रथा के बारे में वर्णन किया गया है। यद्यपि यह सत्य है कि लेखक का ज्ञान राजपूतों तथा तुर्कों की युद्ध प्रणाली के बारे में नगण्य था तथापि 14 वीं शताब्दी की सैन्य व्यवस्था के बारे में इस ग्रन्थ से महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त होती है।

(ii) सोमा सुन्दर द्वारा रचित लोक कथाएँ

सोमा द्वारा रचित तीन कृतियों से पता चलता है कि वह सचौर का निवासी था। उसके पिता का नाम रूपसी पवार तथा माता का नाम लीना देवी था। उसके धार्मिक गुरु प्रसिद्ध जैन सन्त जिनचन्द्र सूरी थे। उसने अपनी लोककथाएँ 16 वीं शताब्दी में राजस्थानी तथा गुजराती भाषा में लिखी थीं।

प्रथम कृति 'सिंहल सूत्र' नामक ग्रन्थ की रचना उन्होंने मेड़ता में विक्रम संवत् 1672 में की। द्वितीय कृति "वल्कलचिरी" की रचना विक्रम संवत् 1681 में जैसलमेर की। तृतीय कृति की रचना विक्रम संवत् 1695 में जालौर में की, जिसमें चम्पक सेठ की कथा का सकलन है।

सोमा ने किंवदंतियों के आधार पर अपनी कृतियों को लिखा है, इसलिए इसमें वर्णित घटनाएं विश्वसनीय नहीं कही जा सकती। ऐसा मालूम होता है कि वह अपनी कृतियां को अपने मित्रों को बताना चाहता था, इसलिए एक स्थान से दूसरे स्थान की यात्रा किया करता था। सिंहल सूत्र में जल यात्रा की कहानी का वर्णन किया गया है, जो उस समय के समाज पर प्रकाश डालती है। इसी प्रकार दूसरी कहानियों से भी 16 वीं शताब्दी के समाज की मानसिक स्थिति के बारे में जानकारी प्राप्त होती है।

(iii) कक्कड़ सूरी द्वारा रचित नाभीनन्दन जिनजोधार प्रबन्ध

कक्कड़ सूरी ने इस काव्य ग्रन्थ की रचना 14 वीं शताब्दी में की। यह संस्कृत भाषा के पदों में रचित काव्य है, जिसमें पांच अध्याय है। इससे पता चलता है कि प्रसिद्ध जैन साधक समरसेन ने शत्रुञ्जय नामक मन्दिर का निर्माण करवाया था। इसमें इस मन्दिर के उत्सव का अच्छा वर्णन किया गया है। इससे उकेश्वर (वर्तमान ओसियां) और विरातपुर (आधुनिक विराट) आदि नगरों की धार्मिक तथा आर्थिक स्थिति पर अच्छा प्रकाश पड़ता है। इस ग्रन्थ से अलाउद्दीन खिलजी के दरबार तथा तुर्की अमीरों के स्वभाव और चरित्र के बारे में भी महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त होती है। इससे उस समय के व्यापारियों तथा और उनके कार्यों पर प्रकाश पड़ता है। इसके अतिरिक्त इसमें पश्चिमी राजस्थान की सामाजिक और आर्थिक स्थिति का अच्छा वर्णन उपलब्ध है।

(iv) हेमरतन द्वारा रचित "गोरा बादल"

हेमरतन लाहौर के जैन श्रावक थे, जो मेवाड़ के महाराणा प्रताप एव जयमल के समथक थे। उन्होंने विक्रम सवत् 1645 में गोरा बादल नामक ग्रन्थ की रचना की थी इसके 25 वर्ष बाद गोरा बादल चौपाई की रचना की गई थी। इसमे राजपूतों की युद्ध प्रणाली के बारे में जानकारी प्राप्त होती है। वे स्वामी धम के एक मुख्य उद्देश्य पर प्रकाश डालते है जो उस समय की आवश्यकता थी। इससे राणा प्रताप और साधु जैतमाल के बारे में जानकारी प्राप्त होती है। इस काव्य को आधार बनाकर पदमनी की कहानी के ऐतिहासिक पक्ष को सिद्ध किया जा सकता है।

(v) उपाध्याय लब्धोदय कृत पदमनी चरित्र चौपाई

17 वी शताब्दी के जैन साहित्य के रचयिताओ में उपाध्याय लब्धोदय का महत्वपूर्ण स्थान है। उन्होंने अपने जीवन का अधिकांश समय उदयपुर, गोगुन्दा एव धुलव में व्यतीत किया। इनके गुरु का नाम ज्ञानकुशल था। मलय सुन्दर चौपाई मे गुरु एव शिष्य के बीच सम्बन्धो का वर्णन है। इससे पता चलता है कि रत्न सुन्दर कुशालसिंह, कल्याण सागर, जशहर्ष खेतसी और सावलदास आदि इनके शिष्य थे। इन्होंने राणा के मन्त्री भागचन्द की प्रेरणा से "पद्मनी चरित्र चौपाई" नामक काव्य का सकलन विक्रम सवत् 1706-7 मे किया। इसमे पदमनी की कहानी का वणन किया गया है फिर भी इससे चित्तौड़ की उन्नत स्थिति एव बनावट के बारे में जानकारी प्राप्त होती है। इसमे उस समय के सामाजिक जीवन का सुन्दर वर्णन है। इससे पता चलता है कि उस समय दास प्रथा का प्रचलन था तथा लोक मनोरजन के लिये क्षत्राणी का खेल खेलते थे। इससे 17 वी शताब्दी की सामाजिक व्यवस्था के बारे मे महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त होती है।

(vi) सोम सूरी कृत सोम सौभाग्य महाकाव्य

सोम सूरी ने 15 वी शताब्दी मे इस ग्रन्थ की रचना की थी। इससे हम उस समय के सामाजिक एव सास्कृतिक जीवन के बारे मे जानकारी मिलती है। यद्यपि यह पुस्तक एतिहासिक दृष्टि से काफी कमजोर है तथापि इसमें महाराणा कुम्भा की उपलब्धियो का अच्छा वणन है। लेखक ने चार चरणो मे शिक्षा प्राप्त की थी। प्रथम चरण मे ज्योतिषी के बताये हुए शुभमुहूर्त पर विद्यारम्भ सस्कार मनाया गया था। दूसरे चरण मे शिक्षा के उद्देश्यो को बताया गया है एव तीसरे चरण मे भी इसी का विवेचन है। चतुथ चरण मे इनके अध्ययन का वणन है। शिक्षा की समाप्ति के पश्चात लेखक ने शिष्यो द्वारा अध्यापक को दी जाने वाली अन्तिम भेंट तथा दीक्षा समारोह का वणन किया है। इस ग्रन्थ से 15 वीं शताब्दी की शिक्षा प्रणाली के बारे मे जानकारी प्राप्त होती है।

इस ग्रन्थ से पता चलता है कि देवाकूल पताका [वतमान देलवाड़ा] उस समय जैन धम तथा व्यापार का प्रसिद्ध केन्द्र था। लेखक के अनुसार वहा के बाजारो मे

विदेशी और स्वदेशी कपडा भरा रहता था। यहा के व्यापारी दक्ष थे। इस ग्रथ से हमे मेवाड की चित्रकला के उद्भव एव विकास के बारे मे जानकारी प्राप्त होती है।

(vii) दौलतविजय कृत खुमान रासो

इस ग्रथ की रचना दौलत विजय ने विक्रम सवत् 1767 से 1790 के बीच की थी। इसमें शुरू के गुहिलोतों से लेकर राजसिह तक का वर्णन मिलता है। इससे पता चलता है कि लेखक के प्रमुख गुरु सुमति साधु सूरी, पदमविजय, जयविजय एव शान्तिविजय आदि थे। इसमे उस समय के क्षत्रिया के त्याग एव बलिदान का भी वर्णन किया गया है एव उस समय की सती प्रथा, खानपान, पर्दा प्रथा, गुलामी प्रथा, तथा वेशभूषा के बारे मे जानकारी प्राप्त होती है। इसमे चित्तौड की सेना, वहा के दुर्ग और हथियारो का भी अच्छा वर्णन है। यही कारण है कि इस ग्रन्थ को मेवाड का अनल्स भी कहा जाता है।

6 चित्र एव चित्रित ग्रन्थो का ऐतिहासिक महत्व

राजस्थान के कई व्यक्तिगत तथा राजकीय सग्रहालयो म म ययुगीन चित्र तथा चित्रित ग्रन्थ उपलब्ध हुए है, जिनसे उस समय के रीति रिवाजो उत्सवो त्यौहारो, मनोरजन के साधनो और वेशभूषा के बारे म जानकारी प्राप्त होती है। उदयपुर के सरस्वती भण्डार की आर्श रामायण से जीवन के कई पहलुओ के बारे मे पता चलता है। इन ग्रन्थो से न केवल उस काल की कला के स्तर के बारे म जानकारी प्राप्त होती है, अपितु सामाजिक तथा सास्कृतिक जीवन पर भी प्रकाश पडता है।

उपरोक्त विवेचन से यह स्पष्ट है कि ख्यात और जन साहित्य से मध्यकालीन राजस्थान की आर्थिक, सामाजिक, एव राजनीतिक स्थिति पर भी प्रकाश पडता है। और वशावलिया राजपूत राजाओ के वशक्रम पर प्रकाश डालती है। यदि इन साधनो का प्रयोग कर राजस्थान का इतिहास फिर से लिखा जाय, तो हमारे समक्ष कई नये तथ्य उभरकर आयेंगे।

पुरालेख सम्बन्धी स्रोत

राजस्थान के इतिहास के बारे मे पुरालेख साधनो से महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त होती है। इसका कारण यह है कि यह समसामयिक होते हुए भी मूलरूप से प्राप्त होते हैं। इसमे सनद, पट्टे, परवाने, फरमान, निशान, खरीता तथा विभिन्न व्यक्तियो के बीच पत्र व्यवहार आदि आते हैं। डा० भाटी ने इसकी प्रामाणिकता श्रेष्ठ होने के निम्न तीन कारण बताये हैं—

(i) इनका सम्बन्ध उस समय की ऐतिहासिक घटनाओ से होता है।

(ii) इनको लिखने वाले वे व्यक्ति थे, जो घटनाक्रम के समय कार्यरत थे।

(iii) इनमे घटनाओ का सही वर्णन किया गया है। ये उस समय की राजनैतिक परिस्थितियो पर अच्छा प्रकाश डालते है।

श्री खडगावत ने इस बारे मे लिखा है कि, 'अन्य साधनो से हम सिर्फ घटनाओ का ही वर्णन मिलता है परन्तु इनका परवानो से ये घटनाएँ क्यो कैसे, किन परिस्थितियो मे घटी, इनके बारे मे भी ज्ञान होता है क्योकि अधिकाश पत्र नीति निश्चित करने से पूर्व विभिन्न शासको द्वारा विचारो के आदान-प्रदान को दर्शाते हैं। राजनैतिक घटनाओ के लिये ही नही, अपितु धार्मिक विश्वासो, सैनिक अभियानो, युद्ध के तौर-तरीका, राज व्यवस्था, लगान कर, सामाजिक दशा, राजाओ को मिलने वाले शाही खिताब आदि के महत्वपूर्ण संकेत मिलते हैं। अतः वे इतिहास के बहुत बडे प्रामाणिक साधन है।

16 वी शताब्दी के पश्चात राजस्थान के प्रमुख शासको ने अपने यहाँ सरकारी कागजातो का रेकार्ड रखवाना प्रारम्भ कर दिया था। मुल्ला सुख मुगल सम्राट हुमायूँ का पुस्तकालयाध्यक्ष था, जिसे मारवाड के शासक मालदेव ने अपने राज्य मे नियुक्त किया था। 1562 से लेकर 1750 तक आमेर राज्य के मुगल शासको के साथ घनिष्ठ सम्बन्ध रहे। 1570 ई० तक राजस्थान के अधिकाश राजाओ ने अकबर की अधीनता स्वीकार कर ली थी। इस पर अकबर ने उन्हे मनसब तथा वतन, जागीर आदि प्रदान की। यह परम्परा आगे भी जारी रही। मुगलो और राजस्थान के शासको के बीच जो पत्र व्यवहार हुआ उसको तथा उनके राज्य से सम्बन्धित सरकारी रेकार्ड को सुरक्षित रखा जाता था।

18 वी शताब्दी के उत्तरार्द्ध मे मराठो ने राजस्थान मे लूटमार प्रारम्भ कर दी। ऐसे समय कुछ राज्यों की पुरालेख सामग्री नष्ट हो गई। फिर भी 19वी और 20 वी शताब्दी का पुरालेख साहित्य सुरक्षित रहा जिसे राजस्थान के सभी राजपूत शासको ने राज्य सरकार को सौप दिया था। यह सारा साहित्य राजस्थान राज्य के केन्द्रीय अभिलेखागार बीकानेर मे मौजूद है।

पुरालेख सामग्री

16वी शताब्दी से लेकर 19 वी शताब्दी तक का पुरालेख साहित्य फारसी एव राजस्थानी भाषा म लिपिबद्ध है, जिससे उस समय की विश्वसनीय जानकारी प्राप्त होती है। परन्तु 20 वी शताब्दी का पुरालेख साहित्य हिन्दी, अंग्रेजी और राजस्थानी भाषा मे लिपिबद्ध है।

राजस्थान के इन साधनो को निम्न तीन भागो म विभाजित किया जा सकता है

1 राजस्थान के पुरालेख सग्रहालय।
2 पड़ोसी राज्या के पुरालेख सग्रहालय।
3 व्यक्तिगत सग्रहालय (भूतपूर्व जागीरदारो एव उच्च पदाधिकारियो के निजी सग्रहालय)

1 राजस्थान के पुरालेख सग्रहालय—

राजस्थान राज्य के अभिलेखो से राजस्थान के इतिहास के बारे म विश्वसनीय जानकारी प्राप्त होती है। डॉ भटनागर के अनुसार अभिलेख सग्रहालय म उपलब्ध सामग्री को निम्नलिखित भागो मे विभाजित किया जा सकता है —

(i) खरीता—एक शासक दूसरे शासक को जो पत्र भेजता था, उसको खरीता कहा जाता है। जयपुर के पुरालेख विभाग मे ऐसे बहुत से पत्र उपलब्ध हैं जो विभिन्न शासको द्वारा जयपुर के महाराजा को भेजे गये थे। इन पत्रो से जयपुर महाराजा की नीति, गुप्त समझौते एव उनके मुगलो से सम्बन्धो के बारे म जानकारी प्राप्त होती है। इनमे राजस्थान के राज्यो के आपसी सम्बन्धों का भी वर्णन किया गया है।

(ii) परवाना—परवाना उन पत्रो को कहा जाता था, जो कि शासक द्वारा अपने अधीनस्थ कर्मचारियो को भेजे जाते थे। इन पत्रो मे राजस्थान के विभिन्न राज्यो की राजनीतिक स्थिति के बारे म जानकारी प्राप्त होती है।

(iii) अखबारात—यह मुगल दरबार द्वारा प्रकाशित दैनिक बुलेटिनो का सग्रह है। इससे मुगल दरबार की महत्वपूर्ण नियुक्तियों के बारे म जानकारी प्राप्त होती है। इसके अतिरिक्त राजस्थानी शासको के कार्यों पर भी ये अखबारात प्रकाश डालते है।

(iv) वकील रिपोर्टस—मुगल अधीनता स्वीकार करने वाला प्रत्येक शासक मुगल दरबार म अपना एक दूत रखता था, जो मुगल दरबार म घटित होने वाली प्रत्येक घटना की सूचना पत्रो द्वारा अपने शासक को देता था। उन्हे वकील रिपोर्ट्स कहते थे।

इसके अतिरिक्त फरमान, रुक्के, निशान आदि भी पुरालेख सग्रहालय मे उपलब्ध है। फरमान, मन्सूर व रुक्के उन पत्रों को कहते थे, जो एक शासक द्वारा
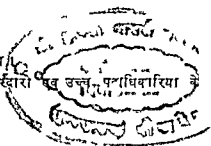
वश के लोगो के नाम, मनसबदारो के नाम, या विदेशी शासको के नाम से भेजता था। उन पर सम्राट का तुगरा होता था। ऐसे पत्रो म सम्राट या तो स्वय कुछ पत्तिया लिखता था या फिर वह अपने दाये हाथ का पजा उस पर अकित कर देता था। जहागीर व समय मे जो निशान जारी होते थे उन पर जहाँगीर के साथ-साथ नूरजहा के नाम की माहर लगाना आवश्यक था, जिसे महारानी मोहर के नाम मे पुकारा जाता था। एम फरमान, रक्के, निशान एव म सूर, जो कि 1585 से 1799 के बीच जारी किय गये थे, राजस्थान म बीकानेर के अभिलेखागार विभाग म मौजूद है। जयपुर महाराजा ने इस प्रकार के 132 निशान 18 म सूर एव 140 फरमान पुरालेख विभाग को सौपे थे। जोधपुर के शासको द्वारा 37 फरमान एव 3 निशान पुरालेख विभाग को सौपे गये जबकि सिरोही द्वारा केवल 8 निशान एव एक फरमान ही सौंपा गया था। ये फरमान व निशान उस समय के राजपूत मुगल सम्ब धो के बारे मे महत्वपूरा जानकारी देते है।

राजस्थान के राजघराना मे वहियो को लिखने का काय मध्य काल मे शुरू हुआ। इन वहियो से अलग अलग विषयो पर प्रकार पडता है। कुछ वहियो से वैवाहिक सम्ब धो के बारे म पता चलता है, तो कुछ से राजाओ की हकीकत के बारे मे जानकारी प्राप्त होती है। ऐसी बहिया 'हकीकत बही'' के नाम से पुकारी जाती हैं। जिन बहिया मे सरकारी आदेशा की नकल अथवा उनके बारे मे वरान मिलता है, 'हकूमत री बही' कहा जाता है। कतिपय बहिया मे प्रमुख व्यक्तियो स प्राप्त पत्रो की प्रतिलिपियो का सग्रह है। इस प्रकार की वहिया खरीता वहिया' कहलाती हैं। इसके अलावा राजपूत राज्यो मे पट्टे व परवाना की वहिया भी मिलती है। इससे मध्यकाल म राजपूत राजाओ द्वारा ज.री किये गये पट्टा व सरकारी आदेशो के बारे मे जानकारी प्राप्त होती है। व्याज की वहिया से पता चलता है कि उस समय लेनदेन मे व्याज की दर क्या प्रचलित थी। कमठाना वहियो से पता चलता है कि सरकारी भवनो का निर्माण करन वाले मजदूरा को कितना वेतन दिया जाता था। व्याज की वहिया एव कमठाना की वहिया बीकानर के केन्द्रीय अभिलेखागार मे उपलब्ध है।

(1) जयपुर का पुरालेख सग्रहालय

जयपुर के सग्रहालय मे खतूत ए महाराजा मिया हजूर एव दस्तूर कौमवार का अच्छा सग्रह उपलब्ध है। राजा का परिवार जो खर्चा करता था उसकी जानकारी हमे सियाहजूर मे मिलती है। आमेर के कछवाहा शासका के अधीन जिन अधिकारियो ने सेवा की थी, उनके नाम व जाति के बारे म हम जानकारी दस्तूर कौमवार से मिलती है, जो बत्तीस जिल्दा म है। इनसे उस समय की सामाजिक धार्मिक तथा आर्थिक स्थिति के बारे म भी जानकारी प्राप्त होती है। 'तोजी रेकार्ड' मे दैनिक व्यय के हिसाब व बारे म पता चलता है। जयपुर के

अभिलेखागार मे कई वकील रिपोर्ट्स भी उपलब्ध हैं, जिनसे मुगल कछवाहा एव मुगल मराठा सम्बन्धो के बारे मे जानकारी प्राप्त होती है।

(ii) उदयपुर का पुरालेख सग्रहालय

उदयपुर के अभिलेखागार मे 'देवस्थान का रेकाड," "सिलहखाना का हिसाब एव हिसाब दफ्तर के कागजात का अच्छा सग्रह है। 17 वी शताब्दी से 20 वी शताब्दी के बीच की जमा खच की बहियां भी इस अभिलेखागार म मौजूद है। इनसे पता चलता है कि कौनसी वस्तुएँ किस मूल्य पर यहा स बाहर भजी जाती थी और किस मूल्य पर बाहर की वस्तुएँ यहा पर आती थी तथा उन पर कितना कर दना पडता था। इन बहिया से पता चलता ह कि राजस्थान म स्थानीय सिक्को क अलावा कुचामनी, महमूदशाही, शाह आलमशाही एव फरुखशाही सिक्के भी प्रचलित थे, जिनक लन देन का भाव चादी की कीमत के आधार पर निर्धारित किया जाता था।

(iii) अजमेर का पुरालेख सग्रहालय

अजमर के अभिलेखागार सग्रहालय म 'दरगाह फाइल" उपलब्ध है जो एतिहासिक दृष्टिकोण स काफी महत्वपूण है। इस फाइल से आन जाने वाले यात्रियो तथा उस समय की कीमता क बार म पता चलता है।

(iv) जोधपुर का पुरालेख सग्रहालय

जोधपुर के सग्रहालय मे दफ्तरी रेकाड प्रचुर मात्रा म उपलब्ध है। इस रेकाड मे बहियाँ फाइलें और पटटे आदि आते है। मारवाड मे पत्रो का बहिया के रूप म रखा जाता था। प्रत्यक बही म 150 से लेकर 500 पत्रा का सग्रह है। विभिन्न विषयो के आधार पर इन बहिया को निम्न भागो म विभाजित किया जा सकता है —

(1) हकीकत बही—इनसे जोधपुर के शासको के कार्यो, यात्राओ और उनसे मिलने वाले राजनीतिक व्यक्तियो के बारे म जानकारी प्राप्त होती है।

15वी शताब्दी से लेकर जोधपुर के शासक हनुमन्तसिंह तक की बहिया मिलती है। लेकिन किसी भी बही मे 10 वष से ज्यादा समय का वणन नही मिलता है।

(2) अर्जी बही—इस प्रकार की सात बहिया है। अधीनस्थ कमचारियो ने अपने उच्च पदाधिकारिया एव शासको का जो पत्र भेजे थे, उनके बारे म इन बहियो से पता चलता है।

(3) ओहदा बही—इस प्रकार की सात बहिया हैं। इनसे पता चलता है कि जोधपुर के महाराजाओ न क्या क्या आदेश दिय थे, तथा उस समय कौन कौन से कमचारी भ्रष्टाचार म लिप्त थे।

(4) खास रुक्का बही—इनमें जोधपुर के महाराजाओं द्वारा अपने अधीनस्थ कर्मचारियों को जो आदेश दिये गये थे उनका वर्णन किया गया है। 17वीं शताब्दी से उक्त सामग्री व्यवस्थित रूप से मिलती है। इन बहियों से अधिकारियों की नियुक्तियों के बारे में तथा राज्य के आय व्यय के बारे में एवं प्रशासनिक गतिविधियों के बारे में जानकारी प्राप्त होती है।

(v) कोटा का पुरालेख संग्रहालय

कोटा के संग्रहालय में उपलब्ध रेकार्ड 1634 ई. से प्रारम्भ होते हैं। यहाँ लगभग 6000 बस्ते हैं। प्रत्येक बस्ते में लगभग 300 पत्र होंगे। ये सारे पत्र क्रमबद्ध रूप से तिथिवार जमे हुए हैं। इनको निम्न चार भागों में विभक्त किया जा सकता है —

(1) मुल्की—ये बहियाँ वे हैं, जिनमें 3 वर्ष से लेकर 10 वर्ष तक का आय व्यय का हिसाब लिखा हुआ है। इनसे राज्य की आय, गांवों तथा परगनों की आर्थिक स्थिति अधिकारियों तथा कर्मचारियों का वेतन, युद्ध एवं अभियान आदि के बारे में जानकारी प्राप्त होती है।

(2) दो वर्की—दो परत वाले रेकार्ड्स को दो वर्की कहा जाता है। ये क्रमबद्ध रूप से विषयवार जमे हुए हैं। इन पत्रों में दैनिक प्रशासन, युद्ध के समय की घटनाओं तथा व्यापारिक सम्बन्धों के बारे में जानकारी प्राप्त होती है।

(3) तलकी—इनमें राजाओं की आज्ञाएँ संग्रहीत हैं। इसके अतिरिक्त उन पत्रों की नकलें भी उपलब्ध हैं जो राजा द्वारा अन्य शासकों तथा अपने अधीनस्थ कर्मचारियों तथा अधिकारियों को भेजे गये थे। ये पत्र समकालीन घटनाओं पर और राजाओं के कूटनीतिक कार्यों पर अच्छा प्रकाश डालते हैं।

(4) जमा बन्दी—ये राजस्व से सम्बन्धित पत्र हैं। इन पत्रों में उस समय के मासिक या अर्द्ध वार्षिक राजस्व, चुंगी जगलात, नये एवं पुराने करों का वर्णन किया गया है। इन पत्रों में हिसाब काफी विस्तृत रूप से लिखा हुआ है, जिससे हमें उस समय की राज्य की आर्थिक स्थिति के बारे में पता चलता है। डॉ. मथुरा लाल शर्मा ने कहा है कि, "दैनिक हिसाबी कागजों में समाविष्ट होने के कारण कोटा राज्य के संग्रह की सत्यता निर्विवाद है।"

ये रिकार्ड उस समय के सामाजिक उत्सवों त्यौहारों मजदूरों के वेतन, विभिन्न प्रकार के करों और दान पुण्य पर अच्छा प्रकाश डालते हैं।

(vi) बीकानेर का पुरालेख संग्रहालय

बीकानेर के अभिलेखागार में कई ऐसी बहियाँ और फाईलें उपलब्ध हैं, जो आय व्यय पर प्रकाश डालती हैं। ब्याव बहियों से पता चलता है कि किन राजपूत शासकों ने मुगलों के साथ वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित किये थे। यहाँ कई

एसे पत्र भी उपलब्ध है, जो अधिकारियो के वेतन तथा उनके पद क्रम के बारे म प्रकाश डालते हैं।

(2) पडोसी राज्यों के पुरालेख सग्रहालय

पडोसी राज्यो के सग्रहालयो से भी राजस्थान के इतिहास के बारे म महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त होती है। महाराष्ट्र मध्यप्रदेश गुजरात एव पजाब के सग्रहालयो से राजस्थान पर होने वाले मराठा आक्रमणा के बारे म पता चलता है। महाराष्ट्र के बम्बई पुरालेख विभाग एव पूना के सग्रहालयो मे मराठी भाषा म लिपिबद्ध ऐसे हजारो पत्र है, जिनम राजस्थान की घटनाओ का वर्णन है। इनस राजस्थान व मराठाओ के सम्बन्धों के बारे म पता चलता है तथा मुगल नीति के प्रति राजस्थानी शासका की प्रतिक्रिया के बारे मे बोध होता है।

मध्यप्रदेश के सग्रहालयो मे ग्वालियर, इन्दौर आदि महत्वपूर्ण है, जिनमे सग्रहीत ऐतिहासिक सामग्री से राजस्थान के इतिहास के बारे म महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त होती है। चूँकि पजाब एव गुजरात आदि पडोसी राज्यो के साथ राजस्थान का घनिष्ठ सम्बन्ध रहा है, अत उनके सग्रहालया से भी राजस्थान के इतिहास के बारे मे महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त होती है।

(3) व्यक्तिगत सग्रहालय

राजाओ के अतिरिक्त उस समय के प्रतिष्ठित व्यक्ति भी अपनी उपलब्धियो का रिकाड रखते थे और बडे बडे जागीरदार भी शासको की तरह अपनी उपलब्धियो के बारे मे बढ़िया लिखवाते थे। इस प्रकार की ऐतिहासिक सामग्री राजस्थान व बाहर के अनेक जागीरदारों के पास सग्रहीत है। डा रघुवीरसिह के अनुसार ऐसे जागीरदारो की सख्या सैंकडो हो सकती है। इन व्यक्तिगत सग्रहालयो मे उपलब्ध रेकाड से समकालीन घटनाओ पर अच्छा प्रकाश पडता है। धुलधुले रेकाड म इसका सबसे अधिक महत्वपूर्ण उदाहरण है।

अभी हाल ही म डॉ वी एस भागव ने भारतीय ऐतिहासिक अनुसधान परिषद नई दिल्ली की आर्थिक सहायता से मसूदा, खरवास, भिनाय, उनियारा एव पीसागन के अभिलेखो का सर्वेक्षण किया तथा उसके पश्चात् उनकी सूचिया तैयार की।

उपरोक्त विवेचन से यह स्पष्ट हो जाता है कि मध्यकालीन इतिहास जानने के स्रोत राजस्थानी एव फारसी भाषा मे लिपिबद्ध है, जिनसे इतिहास के बारे म विश्वसनीय जानकारी प्राप्त होती है। यह सारी सामग्री राजस्थान मे बीकानेर के अभिलेखागार मे सुरक्षित है। बीकानेर मे 18वी सदी के मराठी भाषा मे लिखे हुए पत्र भी उपलब्ध है, जिनसे राजपूत राजाओ के मराठो के सम्बन्धो के बारे मे जानकारी मिलती है।

---

4 | राजस्थान के आधुनिक इतिहासकार

कनल जेम्स टाड क प्रसिद्ध ग्र थ एनल्स एण्ड एण्टीक्विटीज आफ राजस्थान'
के प्रकाशित होने के बा' राजस्थान का इतिहास क्रमबद्ध रूप स हमार सामने आया।
टाड के ग्र थ से प्रेरित होकर महाकवि सूयमल्ल मिश्रण ने 1857 ई० से पूव अपने
प्रसिद्ध ग्र थ "वश भास्कर" की रचना की। उनके इस अधूर ग्र थ को उनके दत्तक
पुत्र मुरारीदान द्वारा पूरा किया गया। इसम बू दी राज्य का इतिहास है। गगासहाय
जो कि सूयमल्ल मिश्रण के मित्र भी थे, ने 'वशप्रदाप' नामक ग्र थ लिखा। इसम भी
बू दी राज्य का इतिहास है। कविराजा श्यामलदास ने 'वीर विनोद" नामक
ग्र थ लिखा जिसम मेवाड का इतिहास है। इसके बाद दयालदास ने ख्यात, बाकी
दास ने ऐतिहासिक बातें", बाबू ज्वालासहाय ने वाकया ए राजपूताना" तथा
रामनाथ रतनू ने "इतिहास राजस्थान" नामक ग्र थ लिखे। इस प्रकार राजस्थान
के आधुनिक इतिहासकारो मे सूयमल्ल मिश्रण, कनल टाड, श्यामलदास, ओझा,
मु शी देवीप्रसाद, गगासहाय जगदीश सिंह गहलोत एव रामनाथ रतनू आदि के
नाम उल्लेखनीय हैं।

1 महाकवि सूयमल्ल मिश्रण (1815–1868 ई)

सूयमल्ल मिश्रण का ज म बूदी मे 1815 ई० मे हुआ था। डा० बी एस
भागव के अनुसार उनकी मृत्यु 1868 ई म हुई थी। उनके पिता का नाम चडीदान
था, जो अपने समय के प्रसिद्ध विद्वान एव कवि थे। उ होने निम्न तीन ग्र था की
रचना की —(i) बलविग्रह (ii) सारसागर एव (iii) वशाभरण। बू दी के शासक
महाराव रामसिंह के दरबार म इनका अच्छा सम्मान था, इसलिय सूयमल्ल को
बचपन से ही साहित्यिक वातावरण प्राप्त हुआ।

वश भास्कर से पता चलता है कि 10 वष की आयु म सूयमल्ल की गिनती
अच्छे कवियो मे होने लग गई थी और 12 वष की आयु तक वे व्याकरण एव गद्य
ज्ञान म निपुण बन गये थे। सूयमल्ल मिश्रण ने निम्न ग्र था की रचना की—

(i) वश भास्कर (ii) वीर सतसई (iii) धातु रूपावली एव (iv) बलवद
विलास

इनको वंश भास्कर नामक रचना से अद्वितीय ख्याति प्राप्त हुई। डॉ कानूनगो के अनुसार 'ऐतिहासिक दृष्टि से यह ग्रन्थ पृथ्वीराज रासो से भी अधिक महत्वपूर्ण है, व साहित्यिक दृष्टि से 19 वी शताब्दी के महाभारत की गणना मे रखा जा सकता है।'

सूर्यमल्ल मिश्रण की गणना बूंदी के पाच रत्नो म थी। ये बूंदी महाराव राजा रामसिंह के दरबारी कवि थे एव अपनी रचनाओ से ये महाकवि के रूप मे प्रसिद्ध हो गए। रामसिंह इनका अच्छा मान-सम्मान करते थे तथा अन्य शासको के दरबार मे भी इनका अच्छा सम्मान था। वे अपने स्वामी की स्तुति का वर्णन ग्रन्थो मे करना उचित नही समझते थे। वे यह मानते थे कि, 'इतिहास मे प्रशसा नही होती है।'' इसी सिद्धान्त को मद्दे नजर रखते हुए उन्होंने अपने ग्रन्थ मे घटनाओ का सही वर्णन किया और जब सत्यता पर आच आते देखी तो उन्होंने सारे प्रलोभनो को ठुकरा दिया। यहा तक कि वे किसी कारण वश अपने प्रसिद्ध ग्रन्थ ''वंश भास्कर'' को भी पूरा नही कर सके इसलिये उनकी यह रचना ऐतिहासिक दृष्टि से काफी महत्व रखती है, यद्यपि यह ग्रन्थ अधूरा होते हुए भी काफी विस्तृत है और लगभग तीन हजार पृष्ठो म मुद्रित हुआ है।

इस ग्रन्थ के अधूरे रहने का प्रमुख कारण यह था कि जब सूर्यमल्ल ने महाराव रामसिंह के दोषो का वर्णन किया तो वे उससे नाराज हो गय, और ग्रन्थ अधूरा रह गया जिसे उनके दत्तक पुत्र मुरारीदान ने पूरा किया। सूर्यमल्ल ने अपने इस ग्रन्थ मे घटनाओ का क्रमबद्ध रूप से वर्णन किया है। इस ग्रन्थ की निष्पक्षता के बारे म सन्देह करना उचित नही होगा, क्योंकि महाकवि ने अपने आश्रयदाता के दोषो का भी वर्णन किया है। उन्हें जो बात ठीक नही लगी उसे उन्होने स्पष्ट शब्दो म गलत कहा, इसके लिये वे हर प्रकार का त्याग करने के लिये सदैव तैयार रहे।

(1) वंश भास्कर नामक ग्रन्थ का परिचय

वंश भास्कर पद्यो म लिखा आठ खण्डो का महाकाव्य है। इसम वर्णित इतिहास का क्षेत्र बहुत लम्बा चौडा है। लेखक का मुख्य उद्देश्य बूंदी के हाडा वंश का ही इतिहास लिखना था परन्तु इसमे समस्त भारतवर्ष का इतिहास आ गया है। इसमे सवा लाख पद है, जो डिंगल भाषा मे लिपिबद्ध हैं। इस ग्रन्थ मे 5–6 भाषा का प्रयोग हुआ है अत ग्रन्थ की भाषा जटिल हो गई है। इसम सृष्टि रचना से लेकर भारत म अंग्रेजी राज्य की स्थापना तक का ऐतिहासिक ब्योरा आ जाता है। बूंदी का इतिहास लिखते समय उन राज्यो और शासको का वर्णन वंश भास्कर म किया गया है जिनके बूंदी राज्य के शासको के साथ दूर-पास के सम्बन्ध रहे थे। अत वंश भास्कर मे समस्त भारतवर्ष का इतिहास आ गया।

ग्रन्थ की विश्वसनीयता

महाकवि सूर्यमल्ल मिश्रण ने ख्यात, बात साहित्य, राजघरानो की बहियो एव फारसी तवारीखो को आधार बनाकर अपने इस ग्रन्थ की रचना की थी।

डॉ० के आर कानूनगो का कहना है कि 'वश भास्कर का सबमे अधिक महत्व ऐतिहासिक सामग्री का विशाल सकलन है।" डॉ गहलोत के शब्दो म ' वश भास्कर कनल टॉड के राजस्थानी इतिहास के आधार पर और अग्रेज सरकार की रिपोर्टों के सहारे पर लिखा गया है। उसम भी आधुनिक खोज से काम नही लिया गया है। वास्तव म इतिहासकार के रूप मे मिश्रण के विपय मे दो प्रकार की धारणाए प्रचलित है —(1) प्रथम धारणा के अनुसार सूयमल्ल मिश्रण जैसा इतिहास वेत्ता नही हुआ और अब होना भी कठिन है एव (11) दूसरी धारणा के अनुसार वह एक कवि और अच्छा विद्वान था, परन्तु इतिहास वेत्ता नही।"

डा० खान का मानना है कि "इन दोना धारणाओ मे पुरानी व नई पीढियो के साथ ही नये और पुराने दृष्टिकोणों मे अ तर है।"

ग्रन्थ की शली

पुरानी पीढी उस इतिहास समझती है जो पुराणो के इतिहास की शली पर आधारित हो जबकि नई पीढी क अनुसार घटनाओ का आलोचनात्मक ढग से अध्ययन करने के बाद जो सत्य बात लिखी जाती है उस ही इतिहास कहा जा सकता है। जहा तक घटनाओ को सत्यतापूवक लिखने का प्रश्न है, सूयमल्ल पर हम उगली नही उठा सकते। इसका प्रत्यक्ष प्रमाण यह है कि महाकवि न अपने स्वामी महाराव राजा रामसिह के दोषो का वणन खुलकर किया। इसका परिणाम यह हुआ कि रामसिह उनसे नाराज हो गय और यह ग्र थ (वश भास्कर) अधूरा रह गया। फिर भी कवि न सत्य की ओर से मु ह नही मोडा और अपने स्वामी का कवल स्तुतिपरक इतिहास को लिखने से इ कार कर दिया। इस प्रकार की सत्यनि ठा को देखकर कृष्णसिह बारहठ जैसे विद्वान ने यह माना है कि सूयमल्ल इतिहास वेत्ता था। डा आसोपा ने लिखा है, "सम्पूर्ण राजस्थान का स्तुति नि दा सूचक इतिहास यदि देखना चाहे तो इस ग्रन्थ मे मिल जाता है। ऐसा सत्यवादी इतिहासकार दूसरा नही हुआ है और होना भी कठिन है।'

सूयमल्ल मे विश्लेपणवादी प्रतिभा का अभाव था। उस जहा स भी ऐतिहासिक सामग्री प्राप्त हुई उसने उसे बिना छानबीन के ज्यों का त्यो ग्रहण कर लिया, इसलिय डॉ ओझा ने महाकवि के बारे मे लिखा है कि, 'मिश्रण न इतिहास लिखन म विशेष खोज की हो, ऐसा प्रतीत नही होता। भारत और राजपूताना म मध्य युग मे इतिहास लिखने की दो परम्पराए समानान्तर रेखाओ की तरह चल पड़ी थीं। प्रथम, अबुल फजल, फरिश्ता और मनूची की परम्परा के आधार पर इतिहास लिखा जा रहा था। द्वितीय, राजपूताना म राज्याश्रित लेखक इतिहासकारो और विचारको की परम्पराओ के आधार पर इतिहास लिखा जा रहा था। राजप्रशस्ति, अमरकाव्य वशावली आदि ग्रन्थ द्वितीय परम्परा के आधार पर लिखे गये थे।'

महाकवि मिश्रण ने ऐतिहासिक सामग्री का न तो अवलोकन किया और न ही इस समस्त सामग्री को पढ़ा उसने केवल वशो का इतिहास लिखा है। और उस

व्यापकता देने मे असफल रहा है। ओझा ने इस सम्बन्ध मे लिखा है कि 'कवि का लक्ष्य कविता की ओर ही रहा है, प्राचीन इतिहास की शुद्धि की ओर नही। इस बात से इन्कार नहीं किया जा सकता कि वश भास्कर का लक्ष्य कविता करना ही रहा है। परन्तु यह नहीं माना जा सकता कि इतिहासकार के उत्तरदायित्व की उसने अवहेलना की हो। जहाँ तक इतिहास की शुद्धि का प्रश्न है, उसने जो ऐतिहासिक सामग्री दी है, उससे अधिक की आशा हम उससे नही कर सकते क्योकि उस युग मे इतिहास के साधन आज की तरह प्रचुर मात्रा मे नही थे और न उस दिशा मे विशेष खोज ही हो पाई थी। उसने उपलब्ध सामग्री के अध्ययन के आधार पर ही अपना मत निर्धारित करने का प्रयास किया था। मिश्रण ने स्पष्ट लिखा है कि प्राप्त सामग्री मे एक ही तथ्य के बीसो रूपान्तर मिलते हैं और अन्य साधन उपलब्ध न होने के कारण उन्ही को समाविष्ट कर लिया गया है। अत पाठको को नीर क्षीर विवेक से, उसमे सार है उसे ही ग्रहण करना चाहिए। जहाँ तक इतिहास म विवेक की कमी का सवाल है वहाँ यह कहा जा सकता है कि यह कमी न केवल सूयमल्ल मे, अपितु इस काल की इतिहास लेखन प्रक्रिया म भी थी। सक्षेप मे कहा जा सकता है कि सूयमल्ल मे ऐतिहासिक बुद्धि की कमी थी परन्तु इस बात से इन्कार नहीं किया जा सकता कि उसने सदैव सत्य बात लिखने का ही प्रयास किया। इस आधार पर हम उसे पुराने खेमे का इतिहासकार मान सकते है और उसके द्वारा रचित ग्रन्थ "वश भास्कर" को ऐतिहासिक ग्रन्थ कहा जा सकता है।

ग्रन्थ का महत्व एव मूल्यांकन

डॉ० मोतीलाल गुप्ता ने इस ग्रन्थ की घटनाओ का आलोचनात्मक अध्ययन करने के पश्चात यह मत व्यक्त किया है कि वश भास्कर को शुद्ध ऐतिहासिक ग्रन्थ माना जा सकता है। डॉ० आसोपा के शब्दो म 'क्षत्रियो की मान मर्यादा, भारतीय वीरो की युद्ध व बलिदान की परम्पराओ तथा इतिहास के निचोड के लिए 'वश भास्कर' स आगे न कोई ग्रन्थ है और न कोई आशा की जाती ह।"

डॉ० मथुरालाल शर्मा के अनुसार ऐतिहासिक शोध की दृष्टि से इस ग्रन्थ का प्रथम एव द्वितीय भाग विशेष महत्व के नही है परन्तु तृतीय एव चतुथ भाग ऐतिहासिक दृष्टि से काफी उपयोगी है। इन दोनो भागो से न केवल बून्दी, कोटा या राजस्थान के बारे मे, अपितु समस्त भारतवष के इतिहास के बार मे महत्वपूर्ण सामग्री प्राप्त होती है।

अनेक आधुनिक शोधकर्ताओं ने अपने शोध ग्रन्थ मे बहुत सी सामग्री वश भास्कर से ली है। और आने वाले वर्षो में राजस्थान के राज्यो पर शोध करने वाला शोधकर्ता इसकी उपेक्षा कर अपने शोध ग्रन्थ को पूर्ण करने म सफल नही

हो सकेगा । इस आधार पर डॉ० कानूनगो का यह कहना है कि डॉ मथुरालाल शर्मा
के अतिरिक्त अन्य किसी भी राजस्थानी इतिहासकार ने इस ग्रन्थ का उचित मूल्य
नही समझा, निराधार प्रतीत होता है ।

वंश भास्कर से न केवल राजनैतिक इतिहास के बारे मे, अपितु उस समय
की सामाजिक एवं सांस्कृतिक स्थिति के बारे मे अच्छी जानकारी मिलती है ।
इसमे हाडा वंश के दो सौ राजाओ का चरित्र चित्रण, उत्सवो, परम्पराओ, धार्मिक
विश्वासो, एवं मनोरंजन के साधनो का अच्छा वर्णन किया गया है । इससे उस
समय के छात्र जीवन के बारे में भी अच्छी झाकी मिलती है । मध्यकालीन धार्मिक
स्थिति का वर्णन करते हुए महाकवि सूर्यमल्ल मिश्रण ने लिखा है कि 'मध्यकाल
में मूर्ति भंजको के डर से मूर्तियां भण्डारो मे रखी जाती थीं । अकबर के समय मे
भी मूर्तियो का तोडा जाना जारी था । औरंगजेब के काल मे मूर्ति और मंदिर
विध्वंस बहुत बढ गया था । इस समय हजारो की संख्या मे हिन्दुओ ने धर्म परिवर्तन
कर लिया था । तत्कालीन सैन्य सज्जा, अभियान, नीति आदि पर भी सामग्री इस
ग्रन्थ मे उपलब्ध है ।" इस प्रकार राजस्थान के इतिहास के बारे मे इस ग्रन्थ से
महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त होती है । अत यह ग्रन्थ ऐतिहासिक दृष्टिकोण से काफी
महत्व रखता है ।

वंश भास्कर की मूल प्रति मुरारीदान के पास थी, जो कि सूर्यमल्ल का
दत्तक पुत्र था । किन्तु वह अब उपलब्ध नही है । श्री कृष्णसिंह बारहठ ने वंश
भास्कर पर टीका लिखी, जो कोटा मे उनके पुस्तकालय मे उपलब्ध है । सम्पूर्ण
वंश भास्कर की मूल प्रति कही देखने को नही मिलती । उसके अंश उम्मेदसिंह
चरित्र एवं बुद्धसिंह चरित्र की प्रतियां राजस्थानी काव्य रसिको के पास उपलब्ध
है जिनका प्रकाशन बूंदी से हो चुका है । इनकी कुछ हस्तलिखित प्रतियां भी
है, जो राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान जोधपुर मे है । इन पर रामकृष्ण आसोपा
ने विस्तृत टीकाएँ लिखी, जिसे प्रताप प्रेस, जोधपुर ने चार बडे बडे भागो मे
प्रकाशित कर दिया और इसी टीका के रूप मे आज वंश भास्कर हमारे
सामने है ।

(ii) वीर सतसई

महाकवि सूर्यमल्ल मिश्रण ने 'वीर सतसई' नामक ग्रन्थ की रचना
1857 ई० के स्वतंत्रता संग्राम के समय मे की । इस विप्लव के समय उन्होंने
अपनी लेखनी के माध्यम से छोटे बडे देशी रजवाडो को जाग्रत किया और उन्हे
तथा देशवासियो को अंग्रेजो के खिलाफ बगावत करने की प्रेरणा दी । महाकवि
ने भारतीय जनता को उस समय निम्न अमर मंत्र दिया था

"इला न देणी आपणी, हालरिया हुलराय ।
पूत सिखावे पालणें, मरण बडाई माय ।।'

सूयमल्ल मिश्रण ने जाघपुर, कोटा, शाहपुरा, बांसवाडा सीतामऊ, रतलाम, रतनपुर, पीपल्या, भिनाय, नामली, कडाणा आदि के शासकों को पत्रा म "इला म देणी आपणी" का सन्देश भेजा था और पत्रो म सभी राजाओ तथा सामन्ता को सगठित होकर अग्रेजो के विरुद्ध बगावत करने को कहा था। इस प्रकार महाकवि ने 1857 इ० के स्वतन्त्रता सग्राम के समय महत्वपूण भूमिका अदा की। 1857 ई० की क्रान्ति के समय क्रान्तिकारी नेता तात्या टोपे ने बून्दी के महाराव राजा रामसिह के यहाँ से सात लाख रुपया लूटा और व असहाय होकर देखते रहे। इसी घटना से प्रेरित होकर उनके आश्रित महाकवि सूयमल्ल मिश्रण ने "वीर सतसई" नामक ग्रन्थ की रचना की, जिसका स्वतन्त्रता सग्राम के इतिहास म महत्वपूण स्थान है।

2 कनल जेम्स टाड (1782–1835 ई०)

कर्नल जेम्स टाड ने अपने जीवन के लगभग 24 वष भारत मे व्यतीत किये। उन्होंने दो ग्रन्थ लिखे —

(i) एनल्स एण्ड एन्टीक्वीटीज आफ राजस्थान (दो जिल्दा म)

(ii) पश्चिमी राजस्थान की यात्रा।

टाड स्काटलैण्ड का निवासी था। उसके पिता का नाम मिस्टर जेम्स टाड था। उसका जन्म 20 माच, 1782 ई० को इगलैण्ड के इगलिस्टन नामक स्थान पर हुआ था।

टाड इन्जीनीयरिंग काय म कुशल थे। इसलिए उन्हे 1801 ई० म देहली के पास पुरानी नहर की पैमाइश का काय सौंपा गया। इसके बाद वे ब्रिटिश ईस्ट इण्डिया कम्पनी की सेना मे एक उच्च पदाधिकारी के पद पर नियुक्त हुए। तब वे राजस्थान, मध्यप्रदेश और गुजरात के सीमावर्ती भागो मे गये। इसी समय उनकी राजस्थान के इतिहास के प्रति जिज्ञासा बढी। इसके अतिरिक्त 1817 से 1822 ई० तक उन्होने पश्चिमी राजस्थान मे पोलीटिकल एजेन्ट के रूप म काय किया था। अत उन्होंने राजस्थान का इतिहास लिखने का निश्चय किया। परिणामस्वरूप टाड ने "एनल्स एण्ड एन्टीक्वीटीज ऑफ राजस्थान' नामक ग्रन्थ दो भागा में लिखा, जिसका प्रथम भाग 1829 ई० म तथा द्वितीय भाग 1832 ई० मे प्रकाशित हुआ। इसके कुछ समय बाद 17 नवम्बर 1835 ई० को 53 वष की आयु मे उनका देहान्त हो गया।

ओझा ने टाड के जीवन चरित्र का मूल्याकन करते हुए लिखा है कि "वह गरीबों से प्रेम करता था। पीडितो के साथ बठकर अपनी सहानुभूति प्रकट करता था और उनको समझा बुझाकर अच्छी जिन्दगी बनाने के लिय आदेश देता था। राजपूत अफीम का सेवन करते थ। उससे इनकी शक्ति नष्ट हो जाती थी।

इसलिये वह अफीम सेवन को छोड देने के लिये राजपूतों से प्रतिज्ञाएँ करवाता था।"[1]

टाड की मानवता और कर्तव्य परायणता की जितनी प्रशंसा की जाय उतनी कम है। इस बात की पुष्टि उसके इस कथन में होती है कि, "मैं इस देश के महलों से नहीं, मिट्टी से प्रेम करता हूं। वृक्षों और उनकी शाखाओं से स्नेह करता हूँ एवं इस देश के स्त्री पुरुषों के साथ मैं अपना आत्मिक सम्बन्ध रखता हूँ।"

ग्रन्थो का परिचय

(i) एनल्स एण्ड एन्टीक्वीटीज ऑफ राजस्थान—कर्नल टाड ने 'एनल्स एण्ड एन्टीक्वीटीज आफ राजस्थान' नामक ग्रन्थ दो जिल्दों में लिखा है। दोनों भागों में कुल मिलाकर 85 अध्याय है। प्रथम भाग में टाड ने राजपूताने की भौगोलिक स्थिति, राजपूतो की वंशावली, राजस्थान की सामन्त व्यवस्था तथा मेवाड का इतिहास लिखा है। दूसरे भाग में मारवाड, आमेर बीकानेर जैसलमर एवं हाडौती आदि राज्यों के इतिहास का वर्णन किया है। प्रथम और द्वितीय भाग में टाड ने जो अपनी यात्रा का वर्णन लिखा है उससे अजमेर तथा पश्चिमी राजस्थान की मरुभूमि के सम्बन्ध के बारे में जानकारी मिलती है।

(ii) पश्चिमी राजस्थान की यात्रा—इस ग्रन्थ मे टाड ने राजपूतों के अन्धविश्वासों, परम्पराओं, मन्दिरो, मूर्तियो, मन्दिर के पुजारियों एवं आदिवासियों का वर्णन किया है। इससे अनहिलवाडा अहमदाबाद और बडौदा के इतिहास के बारे में अच्छी जानकारी प्राप्त होती है। इसके अतिरिक्त उसने पहाडो के दृश्यों का सुन्दर वर्णन किया है तथा यह ग्रन्थ उस समय की दास प्रथा का भी अच्छा चित्र प्रस्तुत करता है। इस प्रकार टाड की दूसरी कृति भी ऐतिहासिक दृष्टिकोण से कोई कम महत्वपूर्ण नहीं है।

कर्नल टाड ने एनल्स के प्राक्कथन मे लिखा है कि 'भारतवर्ष में पैर रखते ही मैंने इस बात का निर्णय कर लिया था कि एक ऐसी जाति के सम्बन्ध में, जिसका ज्ञान यूरोप के लोगों को नहीं के बराबर है, मैं ऐतिहासिक खोज का काम अवश्य करूँगा। अपने इस निर्णय के अनुसार, यहाँ आते ही मैंने अपना कार्य आरम्भ कर दिया था। पूरे दस वर्षों तक एक जैन विद्वान की सहायता लेकर उन पुस्तकों की सामग्री लेने का काम करता रहा, जिनमें राजपूतों के इतिहास की कोई भी घटना मिल सकती थी। यह काम साधारण न था और उसके लिये अधिक से अधिक परिश्रम की आवश्यकता था। इस काम और परिश्रम से मुझे सुख मिलता था। लेकिन मेरे स्वास्थ्य ने अधिक साथ नहीं दिया और रुग्णावस्था में इस देश से लौट जाने के लिये मुझे मजबूर किया।'

---

(1) ओझा, गौरीशंकर हीराचन्द ओझा—राजस्थान का इतिहास, प्रथम खण्ड

कनल टाड ने अपने ग्रन्थ मे यह भी स्वीकार किया है कि 'इस देश के प्राचीन नगरो के खण्डहरो के बीच मे बैठकर मैंने उनके विध्वस होने की कहानियाँ ध्यान देकर सुनी है और उनकी रक्षा करने के लिय इस देश के जिन राजपूत वीरो ने अपनी जीवन की आहुतियाँ दी है, उनको सुनकर मैं अवाक रह गया हूँ। इस देश के इतिहास को समझने के लिये मैंने यहाँ के उन स्थानो को स्वय जाकर देखा है, जहाँ पर युद्ध हुए है अथवा किसी विदेशी शत्रु ने यहाँ पर आक्रमण किया है। घटना स्थलो को देखकर और उस समय की बहुत सी बातो को सुनकर भी मैंने इतिहास की सामग्री जुटाने का काम किया है।'

इन कथनो से स्पष्ट है कि वह राजपूतो की वीरता से काफी प्रभावित हुआ था। इसलिये वह जहाँ कही भी गया उसने एतिहासिक सामग्री एकत्रित करने मे अपना अधिकाश समय व्यतीत किया। अत एनल्स उसके व्यक्तिगत अनुभवो पर आधारित होने के कारण प्रामाणिक ग्रन्थ माना जाता है। डा० जी० एन० शर्मा ने लिखा है, " टाड ने घटनाओ का वर्णन बडा ही मार्मिक व ओजस्वी भाषा मे किया है। राजस्थानी इतिहास के लिए यह ग्रन्थ एक महत्वपूर्ण स्रोत है।"[1]

ग्रन्थ की विश्वसनीयता

एनल्स की विश्वसनीयता का प्रमुख कारण यह है कि टाड ने स्वय उन स्थानो का भ्रमण किया जहा पर घटनाए घटित हुई थी और व्यक्तिगत अनुभव के आधार पर सामग्री एकत्रित की और उन राजघरानो से भी, जिनके पूर्वज किसी घटना से सम्बन्धित थे, व्यक्तिगत सम्पर्क कायम करके उनसे उन घटनाओ के बारे पूछताछ कर फिर उनका विवरण लिखा। इसके अतिरिक्त टाड ने एतिहासिक सामग्री को एकत्रित करने के लिये बहुत से कार्यकर्त्ता भी नियुक्त किये थे, जो स्थान स्थान पर घूमकर उसके द्वारा बताये गये तरीको के अनुसार सामग्री एकत्रित करने का कार्य करते थे। एनल्स के प्रकाशन के बाद टाड को सम्पूर्ण यूरोप और राजस्थान मे बहुत प्रसिद्धि प्राप्त हुई। पुस्तक प्रकाशित होते ही तुरन्त यूरोप के बाजारो मे बिक गई। यूरोपियन लोग राजपूत जाति के गुणो की ओर आकर्षित हुए। टाड के इस कथन को 'राजस्थान मे कोई छोटा सा राज्य भी ऐसा नही है, जिसमे थर्मोपोली जसी रणभूमि नही हो और शायद ही कोई ऐसा नगर मिले जहा लियोनीडास जसा वीर पुरुष उत्पन्न न हुआ हो " पढकर यूरोपवासी आश्चर्यचकित रह गये। कनल टाड ने अपने एनल्स मे राजपूतो के शौर्य, बलिदान और त्याग का जो सजीव वर्णन किया है उससे यह स्पष्ट हो जाता है कि भारतवर्ष के राजपूतो ने यदि फूट ईर्ष्या और विरोध मे अपना ही विनाश नहीं किया होता तो यह निश्चय है कि ससार की कोई भी जाति इसकी बराबरी नही कर सकती थी।"

---

(1) शर्मा, जी एन—राजस्थान का इतिहास

ग्रन्थ की विशेषताएं

एनल्स से राजस्थान के अतिरिक्त भारत के प्राचीन इतिहास से सम्बंधित बहुत सी ऐसी ऐतिहासिक घटनाओं के बारे में जानकारी प्राप्त होती है, जिनका वर्णन अन्यत्र मिलना कठिन है। सभी प्रतिष्ठित इतिहासकार इस बात पर सहमत हैं कि एनल्स एक प्रामाणिक इतिहास है। आधुनिक दृष्टिकोण के आधार पर वैज्ञानिक पद्धति से जो लेखन कार्य चल रहा है, टाड के एनल्स को उस तरह का ग्रन्थ नहीं माना जा सकता। फिर भी यह स्पष्ट है कि इस ग्रन्थ में ऐतिहासिक सामग्री काफी मात्रा में उपलब्ध है। आधुनिक काल में मुद्राओं, स्मारकों, शिलालेखों, प्रशस्तियों, साहित्यिक ग्रन्थों के आधार पर कई अन्वेषण हुए हैं, जिनसे कई नये ऐतिहासिक तथ्य सामने आये हैं। इससे टाड के ग्रन्थ की कई अशुद्धियाँ दूर हुई हैं। परन्तु इस बात को ध्यान में रखना होगा कि जब टाड ने अपने ग्रन्थ की रचना की उस समय उसे इतनी सामग्री उपलब्ध नहीं हो सकी थी।

ग्रन्थ का महत्व

टाड राजस्थान में पोलीटिकल एजेन्ट एवं उच्च सैनिक पदाधिकारी के पद पर कार्य कर चुका था। अतः उसे अन्य राज्यों से सामग्री एकत्रित करने में कोई विशेष कठिनाई नहीं हुई। चारणों से भी उसे बहुत अधिक मात्रा में ऐतिहासिक सामग्री प्राप्त हुई थी। जनश्रुति, जो इतिहास का एक अमूल्य साधन माना जाता है, का भी टाड ने अपने ग्रन्थ में प्रयोग किया था।

कर्नल टाड ने घटनाओं का जो वर्णन किया है, यदि पाठक उन्हें पढ़ें तो प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकते। इस ग्रन्थ को पढ़ने से पता चलता है कि "राजस्थान की भूमि वीरों की जननी है। उसने अनेक महापुरुषों एवं वीरांगनाओं को जन्म दिया है जिन्होंने संकटकाल में निर्दय शत्रुओं से युद्ध कर अपनी मान मर्यादा की रक्षा की। उन्होंने अनेक बार अपने प्राणों की आहुति देकर भी आततायियों एवं आक्रमणकारियों को मार भगाया और अपनी वीरता का परिचय दिया। मेवाड के दुर्ग राजप्रासाद मन्दिर शिलायें, पहाड़ों की चोटियां इसके साक्षी हैं। इस प्रकार का पराक्रम केवल योद्धाओं तक ही सीमित नहीं था, अपितु राजपूतनियों ने भी वीरता, त्याग, आत्मसम्मान तथा देशप्रेम का उदाहरण समय समय पर प्रस्तुत किया। जौहर व्रत' इसका ज्वलन्त उदाहरण है।'

टाड विदेशी था फिर भी उसने जिस प्रकार से राजपूतों के रीति रिवाजों समाज के नियमों और शासन व्यवस्था के बारे में जानकारी प्राप्त की थी, उससे पता चलता है कि वह अलौकिक प्रतिभा का स्वामी था। आधुनिक काल के कई इतिहासकारों ने राजस्थान के इतिहास पर बहुत कुछ लिखा है परन्तु टाड के ग्रन्थ का आज भी उतना ही महत्व है जितना कि पहले था। इस ग्रन्थ से हमें ऐतिहासिक

घटनाओं के अतिरिक्त उस समय की राजपूतों की सामाजिक स्थिति के बारे में भी अच्छी जानकारी प्राप्त होती है।

ग्रन्थ के दोष

यह सत्य है कि कर्नल जेम्स टाड राजस्थान के प्रथम आधुनिक इतिहासकार थे। उन्हें "राजस्थान के इतिहास का पिता" के नाम से भी पुकारा जाता है। उनके ग्रन्थ में अनेक अशुद्धियां रह गई, जिन्हें वर्तमान समय के शोधकर्ताओं ने दूर किया। इसके फलस्वरूप उन्हें शोधजगत में विशेष प्रतिष्ठा प्राप्त हुई। उनकी कृति में निम्न दोष दिखाई देते हैं —

(i) पहली कमी यह थी कि टाड का सम्बन्ध केवल राजपरिवारों से ही रहा था। राजपरिवारों से सम्बन्धित व्यक्तियों से उसने ऐतिहासिक जानकारी और सामग्री प्राप्त की थी। अतः यह आशा करना कि राजपरिवारों ने अपने पूर्वजों की बुराईयों के बारे में टाड को जानकारी दी होगी, व्यर्थ है। अतः उसकी कृति में वर्णित ऐतिहासिक घटनाओं को एकदम निष्पक्ष नहीं माना जा सकता है।

(ii) दूसरी कमी यह दिखाई देती है कि टाड को संस्कृत, राजस्थानी, अरबी, फारसी प्राकृत भाषा का ज्ञान नहीं था। अतः उसे ऐसे लोगों पर निर्भर रहना पड़ा, जो उन भाषाओं को जानते थे। यदि किसी कातिब ने जाने-अनजाने में कोई गलती कर दी तो टाड ने उसे स्वीकार कर लिया होगा क्योंकि वे स्वयं उन भाषाओं को नहीं जानते थे।

(iii) तीसरी कमी यह थी कि उन्होंने अपनी कृतियों को लिखते समय सम्पूर्ण साधनों का प्रयोग नहीं किया। टाड ने कुछ पुरातत्व सामग्री को आधार बनाकर ही अपनी पुस्तक की रचना कर डाली। उन्होंने शिलालेखों, सिक्कों और तत्कालीन प्राचीन साहित्य का उपयोग अपनी कृति में नहीं किया।

(iv) चौथी कमी यह दिखाई देती है कि मध्यकाल के राजपूत राजाओं ने भारत के मुस्लिम शासकों के विरुद्ध निरन्तर संघर्ष किया। इस बारे में टाड ने लिखा है कि अकबर के शासनकाल में राजपूतों ने मजबूर होकर समझौते किये थे। परन्तु औरंगजेब के काल में फिर उन्होंने संघर्ष प्रारम्भ कर दिया। इस प्रकार यह स्पष्ट हो जाता है कि टाड ने अपने वर्णन में साम्प्रदायिक भावनाओं को बढ़ा चढ़ा कर दिखाया है।

(v) पांचवी कमी यह दिखाई देता है कि राजपूत राजा जर और जमीन के लिये ही युद्ध करते थे और उन्होंने जन साधारण के विकास की ओर कभी ध्यान नहीं दिया। टाड ने राजपूत सामन्तों के दोषों का वर्णन अतिरंजित रूप से किया है। उन्होंने राजस्थान के सामन्तवाद की तुलना यूरोप के सामन्तवाद से की जिससे कई भ्रान्तियां उत्पन्न हो गई, जिन्हें दूर करने के लिये आधुनिक इतिहास का प्रयास कर रहे हैं।

(vi) छठी कमी यह दिखाई देती है कि कुछ घटनाओं का वर्णन क्रमबद्ध रूप से नहीं किया गया है। और उनकी दी हुई तारीखें भी सही नहीं हैं। इसका कारण शायद यह हो सकता है कि उसने इंगलैंड जाने के बाद 1826 ई० में विवाह किया और उसके पश्चात उसका स्वास्थ्य खराब रहने लगा था, उस समय उसने 'एनल्स' नामक ग्रंथ को लिखा था। अत ऐसी परिस्थितियों में कुछ अशुद्धियों का रह जाना स्वाभाविक था।

मूल्यांकन

अनेक दोषों के होते हुए भी यह स्वीकार करना पड़ेगा कि राजपूती समाज एव सामंत व्यवस्था का जैसा विस्तृत वर्णन टाड की कृति म मिलता है वैसा अन्यत्र मिलना दुर्लभ है। राजस्थान के इतिहास के लिये यह ग्रंथ एक महत्वपूर्ण स्रोत है। टाड की कृति को उसका प्रारम्भिक प्रयास ही कहा जा सकता है, जिसने भावी पीढ़ी को ऐतिहासिक शोध की प्रेरणा दी। डा० ईश्वरी प्रसाद ने इस ग्रंथ के बारे म लिखा है कि–' यह ग्रंथ सब अंशों म पूर्ण नहीं है परन्तु फिर भी वैज्ञानिक अन्वेषकों के लिये एक अद्भुत मौलिक सामग्री है।''

3 कविराजा श्यामलदास (1838–1893 ई०)

डा के आर कानूनगो ने सत्य ही लिखा है, ''मध्यम वर्ग के चारण घराने से उठकर भी अपने विशाल स्तर पर आयोजित आधुनिक अनुसंधान कार्यक्रमों से श्यामलदास जी के साथ राजपूताने में ज्ञान का सूत्रपात हुआ।'[1]

महामहोपाध्याय कविराजा श्यामलदास का जन्म 1838 ई० मे मेवाड़ के ढोलीवाड़ा नामक गाव में हुआ था। उन्होंने मेवाड़ के महाराणा शम्भूसिंह के शासनकाल में 1871 ई० के लगभग अपने प्रसिद्ध ग्रंथ ''वीर विनोद' का लेखन कार्य प्रारम्भ किया था। परन्तु इसका अधिकांश भाग महाराणा सज्जनसिंह के समय मे लिखा गया था जो शम्भूसिंह के उत्तराधिकारी थे। यह ग्रंथ सम्भवत 1892 ई० म प्रकाशित हुआ था। परन्तु सज्जनसिंह के उत्तराधिकारी महाराणा फतहसिंह ने इसके प्रचलन पर प्रतिबंध लगा दिया था। मौलवी मुहम्मद अबैदुल्लाह फरहती ने ''तवारीख तुहफ ए राजस्थान'' नामक पुस्तक लिखी, जिसको महाराणा फतहसिंह के आदेश से 1889 ई० मे हिन्दी एवं उर्दू म प्रकाशित करवाया गया था। इस पुस्तक की एक प्रति पण्डित झाबरमल शर्मा के संग्रहालय मे मौजूद है। इससे पता चलता है कि जब श्यामलदास ने 'वीर विनोद'' नामक ग्रंथ लिखना शुरू किया तब मेवाड़ के महाराणा ने एक पृथक विभाग की स्थापना की। श्यामलदास के अलावा बाबू रामप्रसाद एवं मौलवी अब्दुल गनी दो भी कार्यरत थे, जिनके प्रयासों से दानपत्रों, शिलालेखों सिक्कों बादशाही फरमानों एवं राजकीय पत्र व्यवहार

(1) कानूनगो, के आर (डॉ)—हिस्टोरिकल ऐसेज, पृष्ठ 70

आदि ऐतिहासिक सामग्री को सग्रहित किया गया । इस कार्य मे मेवाड की सरकार का लगभग एक लाख रुपया खर्च हुआ था । श्यामलदास ने उनकी प्रतिलिपिया अपने ग्रथ मे प्रकाशित करवाई हैं । 2259 पृष्ठो के इस ग्रथ को पूर्ण करने मे उनको 21 वर्ष लगे । इस पर ब्रिटिश सरकार द्वारा उन्हे 'केसर ए हिन्द'' की उपाधि प्रदान की गई थी । इस ग्रन्थ मे कविराजा ने उदयपुर राज्य एव उनसे सम्बन्ध रखने वाले राज्यो के इतिहास का विस्तृत रूप से वर्णन किया है । इससे उस समय के सामाजिक जीवन के बारे मे महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त होती है । परवर्ती इतिहासकारो ने इस ग्रथ को आदि स्रोत मान रखा है ।

डॉ जी एन शर्मा ने लिखा है कि "यह ग्रथ मेवाड के इतिहास को प्रमुख रूप से राजपूताने के इतिहास को साधारण रूप से जानने के लिए बडा ही उपयोगी है ।"[1] इसी प्रकार ओझा ने लिखा है, 'बिना वीर विनोद का अध्ययन किए मेवाड का इतिहास अधूरा है ।'[2]

मेवाड के महाराणा ने श्यामलदास को पहले कविराजा की उपाधि से एव 1888 ई० मे महामहोपाध्याय की उपाधि से सम्मानित किया था । इस प्रकार कविराजा को जीवन मे भी सम्मान मिला और मृत्यु के बाद इस ग्रथ के कारण उन्हे काफी प्रसिद्धी प्राप्त हुई ।

श्यामलदास एव अबुल फजल में समानतायें—

(1) अबुल फजल की तरह श्यामलदास भी मेवाड के महाराणा का राजकीय इतिहासकार था ।

(2) जिस प्रकार अबुल फजल ने ऐतिहासिक सामग्री को सग्रहित कर अपने ग्रन्थो की रचना की उसी प्रकार कविराजा ने ऐतिहासिक सामग्री का सग्रह करने के पश्चात अपने ग्रथ वीर विनोद' को लिखा था ।

(3) अबुल फजल ने अपनी रचनाओ 'अकबर नामा' एव "आईन अकबरी' मे साधनो का हवाला नही दिया है, जिनसे उन्हे सूचना प्राप्त हुई थी । इसी प्रकार श्यामलदास ने उन स्रोतो का वर्णन "वीर विनोद" मे नही किया है, जिनसे उन्होंने सामग्री प्राप्त की थी ।

(4) अबुल फजल की रचनाओ से जितनी जानकारी अकबरकालीन भारत के समय की मिलती है उतनी ही जानकारी श्यामलदास के ग्रथ वीर विनोद' से मध्यकालीन राजस्थान के इतिहास के बारे मे मिलती है ।

---

(1) शर्मा, जी एन — मेवाड मुगल सम्बन्ध पृष्ठ 179

(2) ओझा, गौरीशंकर हीराचन्द—उदयपुर राज्य का इतिहास, प्रथम खण्ड, पृष्ठ 216

इस प्रकार स्पष्ट है कि "वीर विनोद" मे मेवाड तथा उससे सम्बन्ध रखने वाले राज्यों के इतिहास के बारे में महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त होती है। रामनाथ रतनू ने 1892 ई मे राजस्थान का इतिहास नामक पुस्तक लिखी। इसकी भूमिका मे उन्होंने लिखा था कि मेवाड तथा मेवाड से सम्बन्ध रखने वाले राज्यों की ऐतिहासिक जानकारी उन्हें कविराजा के प्रसिद्ध ग्रथ 'वीर विनोद' मे मिली थी। डा गौरीशकर हीराचन्द ओझा को भी इस ग्रन्थ ने प्रेरणा प्रदान की थी।

4 डा० गौरीशकर हीराचन्द ओझा (1863-1939 ई०)

डॉ कानूनगो ने ओझा के बारे में लिखा है, 'राजपूताने में जन्मे अन्तिम और निःसन्देह सबसे महान् इतिहासकार गौरीशकर ओझा थे।"[1]

ओझा का जन्म 1863 ई मे सिरोही जिले के रोहिडा नामक ग्राम में हुआ था। उन्होंने प्रारम्भिक शिक्षा अपने ज्येष्ठ भ्राता के पास मे रहकर बम्बई में प्राप्त की। इसके बाद बडी मुश्किल से उन्होंने हाईस्कूल पास किया। फिर उन्होंने वकालत की ट्रेनिंग करने का निश्चय किया। परन्तु इसी बीच भगवानलाल इन्द्र की प्रेरणा से इनकी इतिहास मे रुचि उत्पन्न हो गयी। आपने टॉड की कृति को पढा। उसमे आपको कई कमियां दिखाई दी। टाड के इतिहास से भी आपको राजस्थान का इतिहास लिखने के बारे में प्रेरणा मिली। तत्पश्चात वे अपनी पत्नी को साथ लेकर राजस्थान भ्रमण पर निकल गये। उदयपुर जाने पर इन्हें ज्ञात हुआ कि श्यामलदास 'वीर विनोद' नामक ग्रन्थ लिख रहा था। वश भास्कर की रचना के बारे में भी उन्हें मालूम हुआ। इस पर ओझा ने अपनी पुस्तक लिखने का निश्चय कर लिया। ओझा ने अपनी पुस्तक का प्रथम भाग कर्नल टॉड, जिसे राजस्थान के इतिहास का पिता माना जाता है, को समर्पित की। 1894 ई मे ओझा की 'प्राचीन लिपीमाला' नामक पुस्तक का प्रथम सस्करण हिन्दी में प्रकाशित हुआ। इसमे भारतीय लिपियो के क्रमिक विकास एव प्राचीन लिपियों को सीखने का तरीका बताया गया था। इस पुस्तक का दूसरा सस्करण 1918 ई मे प्रकाशित हुआ, जिस पर ओझा को मगलाप्रसाद पारितोषिक प्राप्त हुआ था। ओझा की राजपूताने का इतिहास नामक पुस्तक की पहली जिल्द मे चार भाग है। सिरोही प्रतापगढ, एव डूगरपुर का इतिहास एक एक जिल्द में लिखा। इसके अतिरिक्त बीकानेर उदयपुर एव जोधपुर का इतिहास दो दो जिल्दों में लिखा। इस प्रकार ओझा ने ग्यारह इतिहास की पुस्तकें हिन्दी भाषा मे लिखीं तथा एक मध्यकालीन भारतीय सस्कृति एव एक लिपीमाला की रचना भी की थी।

1904-5 मे जब अर्सकिन राजपूताना का गजटियर तयार रहा था तब ओझा ने उन्हे इस काय मे सहायता प्रदान की। 1908 से 1938 तक आपने अजमेर के राजपूताना म्यूजियम के अध्यक्ष पद पर काय किया। उदयपुर तथा

---

1 कानूनगो, के आर (डॉ)—हिस्टोरिकल एसेज।

अजमेर के राजपूताना म्यूजियम ओझा की ही देन हैं। वंशभास्कर एव वीर विनोद नामक ग्रन्थो को पूण करवाने मे भी ओझा ने उल्लेखनीय सहयोग दिया था।

ओझा को अपने जीवन मे भी काफी सम्मान प्राप्त हुआ था। 1927 ई म अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन हुआ था, जिसके ओझा सभापति थे। 1933 ई के हिन्दी साहित्य सम्मेलन की ओर से ओझा को 'अनुशीलन' की उपाधि से सम्मानित किया गया था। ब्रिटिश सरकार ने इन्हे 'महामहोपाध्याय' की उपाधि से सम्मानित किया था। राजस्थान के राजा महाराजा इनका अच्छा सम्मान करते थे। डा गगानाथ झा न ओझा के सम्मान म निम्न शब्द कहे थे -

> "गौरीशकर ओझा नाम विराजते नितराम ।
> भारत मध्ये दश नभ मो मध्ये यथा चन्द्र ॥
> प्राचीन धर्माचरणाद पशाची,
> प्राचीन विधविम लाशयाश्च,
> प्राचीन लेखाय विभासकोड्य
> प्रेस्याच्चिर भारत रत्न भूत"

ओझा के जीवन काल के अन्तिम वर्षों म आखो की रोशनी जा चुकी थी परन्तु स्मरण शक्ति वैसी की वैसी ही थी। कनल टॉड के बाद ओझा ही पहले व्यक्ति थे, जिन्ह राजस्थान के प्रमुख इतिहासकार के रूप मे ख्याति प्राप्त हुई। ओझा को लिपीमाला मूर्तिविज्ञान एव शिलालेखो का अच्छा ज्ञान था। इसलिए उन्होंने अपनी पुस्तको म शिलालेखो का अधिक से अधिक प्रयोग किया है। ओझा ने उर्दू एव सस्कृत भाषा विद्यार्थी जीवन मे ही सीख ली थी। इसलिए उन्होने उर्दू सस्कृत, फारसी एव राजस्थानी भाषा म लिपिबद्ध ख्यातो एव वशावलियो का अपनी रचनाओ मे मुक्त रूप से प्रयोग किया है। ओझा ने स्वय एतिहासिक सामग्री का चयन एव सकलन किया था। इसलिए उनके द्वारा लिखित राजपूताने का इतिहास आज शोधकर्ताओ का माग दशन कर रहा है। ओझा की रचनाओ ने उन्ह राजस्थान के इतिहास म अमर बना दिया है। जिस ऐतिहासिक सामग्री का प्रयोग ओझा अपने नेत्राभाव के कारण नहीं कर सके वह अमूल्य सग्रह उनके पुत्र प्रो रामेश्वर ओझा के अधिकार मे है।

5 मुन्शी देवीप्रसाद (1847-1923 ई)

नवम्बर, 1939 ई के क्षात्र धम के अक के अनुसार, मुन्शी देवीप्रसाद का जन्म 1847 ई म जयपुर मे हुआ था। उनके पिता का नाम नत्थनलाल था, जिनसे उन्होंने उर्दू फारसी और अरबी भाषायें सीखी तथा अपनी माता से हिन्दी भाषा सीखी थी। 16 वष की आयु मे वे टाक राज्य की सवा मे रहे। इसके बाद 1879 ई उन्होने जोधपुर राज्य की सेवा मे नायब सरिश्तेदार (महकमा अपील) क पद पर काय प्रारम्भ किया। 1885 ई मे व जोधपुर मे मुन्सिफ के पद पर नियुक्त हुए। इसी समय उनकी स्वामी दयानन्द सरस्वती के साथ मिलना हो गई।

अत उनसे प्रभावित होकर मुंशी देवीप्रसाद ने अदालत का अधिकांश काम उर्दू के स्थान पर हिंदी में करना प्रारम्भ कर दिया था। 1879 ई. में उन्होंने बूंदी के शासक महाराव राजा रामसिंह के कहने पर 'तौकियत ए कैसर" नामक फारसी पुस्तक का हिंदी में अनुवाद किया और उसका नाम "नौ शेर खा नीति सुधा" रखा। 1883 ई. से 1896 ई. के बीच मुंशी देवी प्रसाद ने लगभग दो दजन से अधिक पुस्तकों का हिन्दी भाषा में अनुवाद किया या हिन्दी में लिखी। इनमें से निम्न पुस्तकें विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं—(1) बाबरनामा, (2) हुमायूँनामा, (3) अकबरनामा, (4) जहांगीरनामा (5) औरंगजेबनामा (6) खानखाना नामा (7) शेरशाह की जीवनी, (8) मारवाड़ के महाराजा जसवन्तसिंह की जीवनी (9) उदयपुर के महाराणाओं की जीवनी, (10) जयपुर के महाराजाओं की जीवनी (11) मारवाड़ की जातियों और उप जातियों का वृतान्त।

इसी समय उनके बाबू श्यामसुन्दर दास जो कि नागरी प्रचारिणी सभा के सचिव थे के साथ पत्र व्यवहार के सम्बन्ध थे। मुंशी देवीप्रसाद ने एतिहासिक पुस्तक माला के प्रकाशन के लिए दस हजार रुपया नागरी प्रचारिणी सभा को दिया था। इस राशि का उपयोग आज भी उनके नाम से पुस्तकें प्रकाशित करवाने में होता है। मुंशी देवीप्रसाद ने फारसी भाषा में लिपिबद्ध एतिहासिक ग्रंथों को हिंदी भाषा में अनुवाद कर विद्वानों के लिए जो ऐतिहासिक सामग्री उपलब्ध करवायी है इस वजह से उनका नाम भारतीय इतिहास में सदा अमर रहेगा।

6 पण्डित गंगासहाय

पण्डित गंगासहाय महाकवि सूर्यमल्ल मिश्रण और बूंदी के महाराव राजा रामसिंह के समकालीन थे। इतना ही नहीं वे रामसिंह के घनिष्ट मित्र एवं मुख्य परामर्शदाता भी थे। पण्डित झाबरमल ने एक लेख में पण्डित गंगासहाय के बारे में लिखा है कि वे संस्कृत भाषा के बहुत बड़े विद्वान थे। उन्होंने संस्कृत भाषा में निम्न दो ग्रन्थों की रचना की—(1) न्याय प्रदीप एवं (2) अर्थवताथ प्रकाशित टीका।

इसके अतिरिक्त गंगासहाय ने 'वंश प्रदीप' नामक पुस्तक हिन्दी भाषा में लिखी ताकि जन साधारण इसे पढ़ सकें। इस में बूंदी राज्य का संक्षिप्त इतिहास है। स्वर्गीय महामहोपाध्याय पण्डित राम मिश्र शास्त्री ने कहा था कि पण्डित गंगासहाय की गणना पण्डित मधुसूदन, गदाधर और जगदीश जैसे साहित्यकारों की श्रेणी में की जानी चाहिए। पण्डित झाबरमल शर्मा के प्रयासों से ही उन्हें राजस्थान के एतिहासिक जगत में प्रतिष्ठित स्थान प्राप्त हो सका है।

7 दीवान बहादुर हरविलास शारदा (1867-1955 ई.)

हरविलास शारदा शारदा एक्ट के जन्मदाता थे। उन्होंने निम्न पुस्तकें लिखी—

(1) महाराणा कुम्भा।
(2) महाराणा सांगा की जीवनी।
(3) Hindu Superiority Ajmer
(4) Historical and descriptive
(5) श्याम जी कृष्ण वर्मा की जीवनी।

श्याम जी कृष्ण वर्मा की जीवनी उनकी अन्तिम रचना थी, जिसका प्रकाशन उनकी मृत्यु के पश्चात उनके पौत्रों ने करवाया था। श्यामजी कृष्ण वर्मा अजमेर-मेरवाड़ा के क्रांतिकारी थे। इसमें शारदा ने उनकी उपलब्धियों का वर्णन किया है।

8 रामनाथ रतनू (1860-1910 ई.)

रामनाथ रतनू का जन्म 1860 ई. में चन्द्रपुरा नामक ग्राम में हुआ था। इनके पिता का नाम तेजपाल था जो गाँव के साधारण जागीरदार थे। इन्होंने प्रारम्भिक शिक्षा दिल्ली में प्राप्त की। इसके बाद 1873-1881 ई. तक राजकीय महाविद्यालय, अजमेर में शिक्षा प्राप्त की। कविराज दयालदास सीढायच की पुत्री रुपकुंवरी के साथ इनका दूसरा विवाह हुआ। नौकरी की तलाश में ये सीकर से जयपुर आये, जहां अंग्रेज रेजीडेंट मि. टालबोट ने नोबल स्कूल के प्रधानाध्यापक के पद पर नियुक्ति दिलवा दी। वे इस पद पर 13 वर्ष तक कार्य करते रहे। इसी दौरान उन्होंने "राजस्थान का इतिहास" नामक पुस्तक लिखी थी। इसी समय उन्हें साहित्यिक जगत में इतनी प्रसिद्धि मिली थी कि वे जयपुर साहित्य क्लब के अध्यक्ष बन गये। रामनाथ रतनू के जयपुर के चांपावत सरदारों के साथ मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध थे जिसे जयपुर महाराजा माधोसिंह पसन्द नहीं करते थे। ऐसी स्थिति में वे जोधपुर के सर प्रताप के निमंत्रण पर जयपुर छोड़कर जोधपुर चले गये जहां उन्हें महाराजकुंवर सरदारसिंह के शिक्षक के रूप में नियुक्त किया गया। इसके पश्चात जसवन्तसिंह द्वितीय के निजी सचिव के रूप में कार्य करते रहे। उसी समय उन्हें ईडर के दीवान के पद पर नियुक्ति मिली तो वे महाराजा सरदारसिंह की सेवा को छोड़कर ईडर गये परन्तु अनुकूल जलवायु न होने के कारण किशनगढ चले आये और वहां ज्युडीशियल मैम्बर का कार्य करना प्रारम्भ कर दिया। इसी पद पर कार्य करते हुए 1910 ई. में चन्द्रपुरा (सीकर) नामक ग्राम में ही उनकी मृत्यु हो गयी। नौकरी के दौरान उन्हें फ्रांस, बेल्जियम, जर्मनी एवं हॉलैण्ड आदि देशों में जाने का अवसर प्राप्त हुआ था। रामनाथ रतनू ने "राजस्थान का इतिहास" नामक पुस्तक लिखी थी जिसकी समीक्षा राजस्थान समाचार के 19 अप्रैल, 1894 ई. के अंक में प्रकाशित हुई थी।

जोधपुर के महाराजा सर प्रताप ने रामनाथ को महाराजा सरदारसिंह की दैनिक डायरी लिखने का आदेश दिया था। उन्होंने यह कार्य 6 फरवरी 1896 ई. में प्रारम्भ किया था। हिन्दी भाषा में लिपिबद्ध इसके केवल 19 पृष्ठ ही उपलब्ध होते हैं। रामनाथ रतनू ने मारवाड़ का इतिहास लिखना प्रारम्भ किया जिसके केवल 60 पृष्ठ ही उनके संग्रह से उनके सम्बन्धी केसरीसिंह रूपावास को प्राप्त हुए हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि रामनाथ ने नणसी की ख्यात का डिंगल भाषा में अनुवाद करना प्रारम्भ कर दिया था, परन्तु वे उसे पूरा नहीं कर सके। राजस्थान के इतिहासकारों की भांति वर्तमान समय में अमेरिका के प्रोफेसर रूडोल्फ भी रामनाथ रतनू की उपलब्धियों का अध्ययन करने में जुटे हुए हैं।

---

5 | वर्तमान समय के इतिहासकार

(i) वर्तमान समय के प्रमुख इतिहासकार

1 डॉ० वी० एस० माथुर—मम ऐसपेक्टस ऑफ एडमिनिस्ट्रेशन ऑफ मेवाड
प्रोफेसर इतिहास (अप्रकाशित)
उदयपुर विश्वविद्यालय
उदयपुर (राजस्थान)

2 डॉ० एम० एल० शर्मा—(i) कोटा राज्य का इतिहास (दो जिल्दो म)
(ii) हिस्ट्री ऑफ जयपुर स्टेट
(iii) राइट केटलॉग ग्राफ कोइन्स इन दी इण्डियन म्यूजियम ।

3 डॉ० दशरथ शर्मा— (i) अर्ली चौहान डाईनेस्टीज
(ii) राजस्थान थ्रू दी एजेज भाग—(I) (सम्पादन)
(iii) लेक्चस ऑन राजपूत हिस्ट्री

4 डा० गोपीनाथ शर्मा — (i) मेवाड एण्ड दा मुगल एम्परग
(ii) सोशल लाइफ इन मेडीवल राजस्थान
(iii) राजस्थान का इतिहास भाग I
(vi) राजस्थान निबन्ध सग्रह
(v) राजस्थान स्टडीज
(iv) ए बिबलियोग्राफी आफ मेडीवल राजस्थान

5 डॉ० रघुवीरसिंह— (i) पूव आधुनिक राजस्थान
(ii) महाराणा प्रताप
(iii) दुर्गादास राठौड

6 डॉ० के आर० कानूनगो (i) हिस्टारिकल ऐसेज
(ii) स्टडीज इन राजपूत हिस्ट्री

7 डॉ० वी० एस० भार्गव—(i) मारवाड एण्ड दी मुगल एम्परर्स (1526–1720)
(ii) दी राईज ऑफ कछवाहाज इन ढूंढार (जयपुर)
(iii) राजस्थान का इतिहास

(ii) वर्तमान समय के प्रामाणिक शोध ग्रन्थ

(अ) अंग्रेजी

1 Dr K S Lal—History of the Khaljis
2 Dr P Saran—Descriptive catalogue of the Nonpersian Sources
3 Dr H C Tikkiwal—Jaipur and the Later Mughals
4 Dr R N Prasad—Raja Man Singh of Amber
5 Dr G C Roy Choudhary—History of Mewar
6 Dr Karni Singh-Bikaner relations with Central Powers
7 Dr A C Banerjee—Lectures on Rajput History
8 Dr K S Gupta—(i) Mewar and the Maratha (1735-1818 A D)
(ii) Selections from Banara Records in 2 vols
9 Dr G R Parihar—Marwar and the Marathas (1724-1843 A D)
10 Dr R K Saxena—Maratha Relations with Major States of Rajputana
11 Dr (Mrs) Beni Gupta—Maratha Relations with Kota and Bundi
12 Dr G D Sharma—Rajput Polity
13 Dr (Miss) R P Shastri–Rajrana zalim Singh
14 Dr H C Batra—Jaipur and the East India Company
15 Dr Satish Chandra—Hakumat-ri-Bahi
16 Dr Devi Lal Paliwal—Mewar and British
17 Dr Sukumar Bhattacharya—Rajput States and East India Company
18 Dr Rifaquat Ali—The Kachhawahas under Akbar and Jahangir
19 Dr Ram Pande—Bharatpur up to 1826 A D
20 Dr S R Sharma—Maharana Raj Singh

(ब) हिन्दी

1 डा० निर्मलचन्द्र राय— महाराजा जसवन्तसिंह का जीवन व समय
2 डा० साधना रस्तोगी—मारवाड़ का मौर्य युग
3 डा० मीरा मित्र—महाराजा अजीतसिंह एव उनका युग
4 डा० मांगीलाल व्यास (मयक)—(i) जोधपुर राज्य का इतिहास (1439–1580 ई०)
(ii) वैब कृत 'राजपूताना के सिक्के' का अनुवाद
5 डा० रामप्रसाद दाधीच—महाराजा मानसिंह का व्यक्तित्व एव कृतित्व
6 डा० वी० एस० भटनागर—सवाई जयसिंह
7 डा० राजेन्द्र प्रसाद जोशी—उन्नीसवी शताब्दी का अजमेर
8 डा० शशि अरोड़ा—राजस्थान मे नारी की स्थिति
9 डा० पेमाराम—मध्यकालीन राजस्थान म धार्मिक आन्दोलन
10 डा० एस० एल नागोरी—(i) अलवर राज्य का इतिहास (1775–1857 ई०)
(ii) राजस्थान का इतिहास (शीघ्र प्रकाश्य)

(iii) अप्रकाशित ग्रन्थ

1 डा० ज्ञानप्रकाश पिलानिया—सवाई जयसिह की सास्कृतिक देन
2 डा० गिरीशनाथ माथुर—राजस्थान म मराठा आक्रमण (1782–1818 ई०)
3 Dr K R Kanungo—History of the Baronical House of Diggi
4 Dr Mitthan Lal Mathur—History of early Mewar
5 Dr J N Sarkar—History of Jaipur State
6 Dr C B Tripathi—Mirza Raja Jai Singh
7 Dr V S Bhargava—(I) Selections from Bilara Records (Compiled and edited)
(ii) Forts of Rajasthan

(iv) प्रकाशित पत्र, पत्रिकाए, एव जनरल्स

1 प्रोसीडिंग्स ग्राफ इण्डियन हिस्ट्री काग्रेस
2 जनरल ग्राफ रायल एशियाटिक सोसायटी बगाल
3 प्रताप शोध प्रतिष्ठान पत्रिका
4 मरुभारती
5 शोध पत्रिका (साहित्य सस्थान उदयपुर)

-- -- -- --ड़ी

प्रश्न

1 राजस्थान के इतिहास जानने के प्रमुख साधना को विवेचना कीजिए।

2 राजस्थान में इतिहास को जानने में लिये ख्यातों और शिलालेखो का क्या महत्व है ?

3 1200 से 1900 ई तक राजस्थान के इतिहास जानन के साधनो का वणन कीजिए।

4 पुरालेख साधनो से राजस्थान के इतिहास को जानने मे कहाँ तक सहायता मिलती है ?

5 ख्यात से आप क्या समभन है ? ख्यातो से ऐतिहासिक जानकारी किस प्रकार से प्राप्त की जा सकती है ?

6 रायसिह की बीकानेर प्रशस्ति के ऐतिहासिक महत्व की विवचना कीजिए।

7 राजप्रशस्ति के ऐतिहासिक महत्व का वणन कीजिए।

8 "राजप्रशस्ति महाकाव्य मे महाराणा राजसिंह के मुगल सम्राटा के साथ सम्बन्धो की जानकारी मिलन के साथ-साथ उस युग की सामाजिक एव धार्मिक प्रथाम्रा पर भी प्रकाश पडता है।" (प्रोफसर एस० आर० शर्मा) इस कथन को स्पष्ट कीजिए।

9 'कान्हड दे प्रब ध' एव "बाकीदास की ख्यात" के ऐतिहासिक महत्व की विवेचना कीजिये।

10 "मुहणोत नेणसी राजस्थान का अबुल फजल था।' (मुन्शी दवी प्रसाद) इस कथन की व्याख्या कीजिए।

11 राजस्थान क इतिहास जानने क मुख्य स्रात के रूप मे "नणसी की ख्यात" क महत्व की विवेचना कीजिए।

12 ऐतिहासिक स्रात के रूप म 'वश भास्कर" के महत्व का वणन कीजिए।

13 "वश भास्कर" ऐतिहासिक की अपेक्षा साहित्यिक ग्रथ अधिक है। इस कथन की व्याख्या कीजिए।

14 "राजस्थान के इतिहास को जानने के साधना के आधुनिक स्रोतो के रूप मे कनल टाड की 'एनल्स एण्ड ए टीक्वीटीज आफ राजस्थान' नामक कृति को विशिष्ट स्थान प्राप्त है।" इस कथन की व्याख्या कीजिए।

15 डा० गौरीशकर हीराचन्द ओझा की विभिन्न कृतियो के ऐतिहासिक महत्व का वणन कीजिए।

16 निम्नलिखित पर टिप्पणियाँ लिखिए

(i) राजप्रशस्ति (ii) वंश भास्कर (iii) वीर विनोद (iv) एनल्स एण्ड एन्टीक्वीटीज ऑफ राजस्थान (v) नेणसी की ख्यात।

कुछ महत्वपूर्ण प्रश्न

1 राजस्थान के इतिहास के साधनों के रूप में पुरालेखागार एवं जैन स्रोतों का महत्व स्पष्ट कीजिए। (राज० 1979)

2 आप ख्यात से क्या समझते हैं? राजस्थान में कितने प्रकार की ख्यातें उपलब्ध हैं? राजस्थान के इतिहास के साधन के रूप में ख्यातों का ऐतिहासिक महत्व स्पष्ट करो। (राज० 1979)

3 राजस्थान के इतिहास की जानकारी के लिए फारसी कृतियों तथा ख्यातों एवं वंशावलियों के तुलनात्मक महत्व का मूल्यांकन कीजिए। (राज० 1980)

4 निम्नलिखित साधनों में से किन्हीं दो के ऐतिहासिक महत्व का मूल्यांकन कीजिये —

(i) नेणसी की ख्यात (ii) एनल्स एण्ड एन्टीक्वीटीज ऑफ राजस्थान (iii) वंश भास्कर (iv) वीर विनोद (राज० 1978) (v) नेणसी राजस्थान का अबुल फजल था (राज० 1980)

5 राजस्थान के इतिहास के पुरालेख के मुख्य साधनों का विवेचन कीजिए। (राज० 1981)

6 राजस्थान के इतिहास के प्रमुख फारसी स्रोतों का महत्व बताइये। (राज० 1982)

7 बांकीदास की ख्यात के ऐतिहासिक महत्व की समीक्षा कीजिए। (राज०, 1982)

8 दयालदास के ग्रन्थों का ऐतिहासिक महत्व बताइये। (राज० 1982)

9 राजस्थान की सामाजिक, धार्मिक व सांस्कृतिक इतिहास की जानकारी के लिए राजप्रशस्ति महाकाव्य का मूल्यांकन कीजिए। (राज० 1982)

10 राजस्थान के इतिहास के अध्ययन के लिए कविराजा श्यामलदास व डॉ० ओझा के ग्रन्थों की उपयोगिता पर प्रकाश डालिए। (राज० 1982)

11 1460 ई के कुम्भलगढ़ शिलालेख व कीर्ति स्तम्भ प्रशस्ति के महत्व पर प्रकाश डालिए। (राज० 1982

12 बिजोलिया का लेख (1170 ई) में व रायसिंह प्रशस्ति का महत्व बताइये। (राज० 1983)

13 राजस्थान के इतिहास के लिए नेणसी द्वारा रचित ख्यात की उपयोगिता पर अपने विचार प्रकट कीजिए। (राज० 1983)

14 राजस्थान के इतिहास के स्रोत के रूप म सूयमल्ल द्वारा रचित वश भास्कर' के महत्त्व पर प्रकाश डालिए। (राज० 1983)

15 राजस्थान के राजनीतिक इतिहास के लिए राजप्रशस्ति महाकाव्य महत्त्व स्पष्ट कीजिए। (राज० 1983)

16 'टाड कत एनल्स एण्ड एटिक्वीटीज़ आफ राजस्थान "राजस्थान के इतिहास के लिए अपरिहाय है।" क्या आप इस कथन से सहमत है। (राज० 1983)

17 इतिहासकार के रूप मे कविराज श्यामलदास का मूल्याकन कीजिए। (राज० 1983)

18 कुम्भलगढ शिलालेख के महत्त्व को स्पष्ट कीजिए (राज० 1984)

19 एक इतिहासकार के रूप मे दयालदास का मूल्याकन कीजिए। (राज० 1984)

20 इतिहासकारो मे डॉ गौरीशकर हीराचन्द ओझा का स्थान निर्धारित करो। (राज० 1984)

21 राजस्थान के इतिहास के लिए बाकीदास ख्यात की उपयोगिता बताइए। (राज० 1984)

22 राजस्थान इतिहास की जानकारी के लिए जैन स्रोतो का महत्त्व बताइए। (राज० 1984)

23 निम्नलिखित मे से किन्ही दो पर टिप्पणी लिखिये ,—

(1) वीर विनोद

(ii) रार्यासह प्रशस्ति

(iii) फरमान और निशान

(iv) एनल्स एण्ड ए टीक्वीटीज आफ राजस्थान

(राज० 1984)